कुण्डलिनी सिद्धि
प्रकाशनाथ 'तन्मेय'

श्री कुण्डलिनी सिद्धि
मन्त्र साधना

श्री कुण्डलिनी महाशक्ति की साधना आध्यात्म के अंग के रूप में प्राचीनकाल से चली आ रही है। कुण्डलिनी जागरण पर अनेक हठयोग राजयोगादि की पुस्तकें उपलब्ध हैं, पर कुण्डलिनी की मंत्रात्मक साधना पर काफी समय से पुस्तक का अभाव रहा है। हमें यह पुस्तक प्रकाशित करते हुए अपार हर्ष हो रहा है क्योंकि इसमें सिद्ध ताँत्रिक एवं महान योगी के रूप में विश्वविख्यात गुरु गोरखनाथ के 'नाथ सम्प्रदाय' में जन्मे **श्री प्रकाशनाथ 'तंत्रेश'** ने एक सिद्ध पुरुष की अनुभूत गोपनीय श्री कुण्डलिनी जागरण सिद्धि मंत्र साधना सहित कुण्डलिनी जाग्रत साधकों के अनुभव, विभिन्न ग्रन्थों में कुण्डलिनी महिमा, चक्रों का अनुभूत परिचय, कुण्डलिनी जागरण के मार्ग आदि का पूरा वर्णन सरल हिन्दी भाषा में किया है। कुण्डलिनी साधना के अनुपम रहस्यों को खोलने वाली यह एक उत्कृष्ट पुस्तक है, जिसकी लम्बे समय से साधकों को प्रतीक्षा थी।

कुण्डलिनी की मंत्रात्मक साधना पर स्वतंत्र पुस्तक अब तक प्रकाश में नहीं आई थी। कुण्डलिनी जागरण की मन्त्र पद्धति पर प्राच्य विद्या जगत में ऐसी पुस्तक का अभाव ही रहा जिस कारण यह मंत्र विधान गुप्त सा हो चला है। कुण्डलिनी की मूलभूत जानकारी तथा मंत्रात्मक साधना पर संभवतः यह पहली पुस्तक है इसलिए आशा है कि साधक इसका जोरदार स्वागत करेंगे।

—प्रकाशक
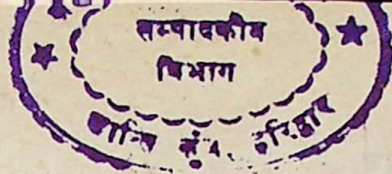
भारतीय प्राच्यविद्या संस्थान की प्रस्तुति

श्री कुण्डलिनी सिद्धि

मन्त्र साधना

[जिसमें सप्त चक्रों का अनुभूत परिचय, कुण्डलिनी जाग्रत साधकों के अनुभव, विभिन्न ग्रन्थों में कुण्डलिनी महिमा, कुण्डलिनी जागरण के मार्ग आदि पर विषद जानकारी के साथ-साथ कुण्डलिनी जागरण सिद्धि हेतु एक सिद्ध पुरुष की कुण्डलिनी की मंत्रात्मक साधना का अभूतपूर्व एवं अनुपम वर्णन।]

लेखक :

श्री प्रकाशनाथ 'तन्त्रेश'

तंत्र शिरोमणि, तांत्रिक मार्तण्ड, तन्त्र शास्त्री, तंत्र योगाचार्य, तंत्र सम्राट आदि अनेक उपाधियों से विभूषित।

मूल्य : २०.००

रणधीर प्रकाशन, हरिद्वार

□ प्रकाशक :

रणधीर प्रकाशन

रेलवे रोड (आरती होटल के पीछे)

हरिद्वार-२४९४०१

☎ (०१३३) ४२६२९७—४२६१९५

वितरक :

१. रणधीर बुक सेल्स (शो रूम)

रेलवे रोड (अस्पताल के सामने) हरिद्वार, उ० प्र०

मुख्य विक्रेता—

१. गगनदीप पुस्तक भण्डार

एस० एन० नगर, हरिद्वार

२. पुस्तक संसार ,बड़ा बाजार, हरिद्वार

३. पुस्तक संसार, नुमाइश का मैदान, जम्मू तवी

□ लेखक : प्रकाश नाथ तंत्रेश,

□ मूल्य : बीस रुपये ।

□ संस्करण : प्रथम १९९३

□ मुद्रक—

सुरेन्द्र प्रिंटर्स

विश्वास नगर, शाहदरा, दिल्ली-३२

लेखकीय

वेदवर्णित जगद्व्यापिनी आद्याशक्ति ही ब्रह्मशक्ति है। अनन्त कोटि ब्रह्माण्डमय दृश्य प्रपंच उसी ब्रह्म शक्ति का सागर है। भारतीय ग्रंथों में इसे देवी, महादेवी, शिवा, प्रकृति, भद्रा, रुद्रा, नित्या, गौरी, धात्री, तथा शक्ति आदि अनेक नामों से वर्णित किया गया है। शास्त्रों में इन प्राणशक्तियों के केन्द्रीभूत शक्ति को देवी कुण्डलिनी कहा गया है। जिस प्रकार वन, पर्वत, समुद्र आदि धारण करने वाली धरती का आधार अनन्त नाग हैं, उसी प्रकार शरीर की समस्त गति और क्रिया शक्ति तथा सब योग तंत्रों का आधार 'कुण्डलिनी शक्ति' हैं—

सशैलवनधात्रीणां यथाधारोऽहिनायकः।
सर्वेषां योग तंत्राणां तथा धारोहि कुंडली ॥

कुण्डलिनी शक्ति की साधना आध्यात्म के अंग के रूप में अनादिकाल से चली आ रही है। समस्त शक्ति एक स्थान में कुण्डली मारकर सर्प के समान बैठी रहती है, इसलिए इस का नाम कुण्डलिनी शक्ति है।

मूलाधार निवासिनी श्री कुंडलिनी शक्ति केशमूल व्यापिनी है। यही हृत्पद्मस्था प्राण शक्ति कहलाती हैं। यही कण्ठस्था तथा स्वप्ननायिका हैं। यही तालुस्था होकर सदाधारा कहलाती है और बिन्दुस्था होकर बिन्दुमालिनी कहलाती हैं। इच्छा, क्रिया और ज्ञान शक्ति ये तीनों एकत्र होने पर यह त्रिशक्तिता कहलाती हैं। इसे शब्दात्मिका और नादशक्ति भी कहते हैं।

साधक जन आत्म कल्याण एवं लोक कल्याण के निमित्त

कुण्डलिनी शक्ति को जागृत करने के लिए प्रयासरत रहते हैं। कुण्डलिनी सिद्धि हेतु ग्रन्थों में अनेक विधियों का वर्णन मिलता हैं, पर कुण्डलिनी मंत्र साधना की स्वतन्त्र पद्धति प्रकाश में नहीं आई है। कुण्डलिनी जागरण सिद्धि के इस मंत्र विधान के प्रति विद्वान, साधकों ने भी यथोचित ध्यान नहीं दिया। इस कारण कुण्डलिनी सिद्धि की इस विधि का प्रचार-प्रसार न हो सका। अस्तु ! इस ग्रंथ में हम साधकों के लाभार्थ एक सिद्ध पुरुष की अनुभूत गोपनीय परम कल्याणकारी कुण्डलिनी की मंत्रात्मक साधना सविधि सरल हिन्दी भाषा में प्रस्तुत कर रहे हैं।

साधक गुरु द्वारा कुण्डलिनी मंत्र की दीक्षा लेकर उसकी यथा विधि साधना करे। इस साधना से श्री कुण्डलिनी महा-शक्ति जागृत होती है। जागरण के पश्चात् कुण्डलिनी मूलाधार से उठकर सुषुम्ना नाड़ी से सहस्रार में जाकर वहाँ विराजमान भगवान आदिनाथ शिव को अमृत से तृप्त करती हुई और स्वयं भी शिव मिलन से परम आनन्दित होती हुई साधक के समस्त शरीर को अमृत से सिंचित करती हैं और साधक को अनेक सिद्धियाँ प्रदान करती हैं। इस प्रकार प्रसन्न एवं जागृत कुण्डलिनी-शक्ति कामधेनु और कल्पवृक्ष की तरह साधक के समस्त मनोरथों को पूर्ण करती हैं।

शक्ति साधना में मंत्र योग का प्राधान्य है, क्योंकि मंत्र योग द्वारा ही कुण्डलिनी शक्ति का सरलता से जागरण संभव है। कुण्डलिनी जागरण सिद्धि के लिए हठयोग राजयोगादि की विधियाँ गृहस्थ साधकों के लिए भी वह असाध्य ही हैं। यही नहीं संन्यासी या ब्रह्मचारी साधकों के लिए भी वह असाध्य नहीं तो सरल भी नहीं हैं। अनेक साधकों को इस क्षेत्र में हठराजादि यौगिक मार्ग की क्लिष्टता का कटु अनुभव है।

इस पुस्तक में कुण्डलिनी की मंत्रात्मक साधना तो प्रस्तुत की ही गई है, इसके अतिरिक्त चक्रों का अनुभूत वर्णन, कुण्डलिनी जागृत साधकों के अनुभव, विभिन्न ग्रन्थों में कुण्डलिनी महिमा, कुण्डलिनी सिद्धि के मार्ग आदि विषयों पर भी महत्वपूर्ण, लाभदायक, उपयोगी एवं ज्ञानवर्धक जानकारी दी गई है। आशा है यह ग्रन्थ योग, तंत्र, आध्यात्म के जिज्ञासुओं एवं साधकों के लिए परम उपयोगी सिद्ध होगा। साथ ही परिश्रमी साधकों से यह भी अपेक्षा करता हूं कि वे पुस्तक में दी गई विधि के अनुसार श्री कुण्डलिनी जागरण सिद्धि मंत्र साधना किसी योग्य गुरु के मार्ग निर्देशन में कर अपने अनुभवों से मुझे अवगत करायेंगे।

अंत में इस पुस्तक को तैयार करने में श्री बाबूनाथ जी मेलावत, श्री भैरूसिंह जी पान वाले, श्री हरजीदास जी मेघवंशी आदि महानुभावों के सहयोग के प्रति आभारी हूँ। साथ ही श्री वुद्धिप्रकाश देव जी उपाध्याय का भी अनुग्रह प्रकट करना जरूरी समझता हूं जिन्होंने अपना बहुमूल्य समय प्रदान कर ग्रन्थ पर अपनी सम्मति प्रदान की है ॥ ॐ शिव गोरक्ष ॥

"आदौ गणपति नत्वा, नत्वा शिव जगद्गुरूम् ।
शंकर गोरक्ष नत्वा, भजे श्री कुण्डलिनीम् ॥
शक्ति रूपिणे माँ कुण्डिले, प्रणव रूपिणे माँ कुण्डिले ।
ब्रह्मरूपिणे माँ कुण्डिले, विश्व रूपिणे माँ कुण्डिले ॥
जाग्रितो ! जाग्रितो !! जाग्रितो !!!"

प्रकाश नाथ 'तन्त्रेश'
संस्थापक
भारतीय प्राच्य विद्या संस्थान

श्री नाथ सदन
विचरली गुजरान मौहल्ला
पोस्ट—ब्यावर-३०५९०१
जिला-अजमेर (राजस्थान)

अध्यक्ष
राजस्थान विधान सभा
जयपुर

क्रमांक : १५११
दिनांक : २९ जुलाई १९९२

संदेश

मुझे यह जानकर प्रसन्नता हुई कि कुण्डलिनी जागरण जैसे गूढ़ विषय की जानकारी सरल भाषा में जन-जन तक पहुँचाने के उद्देश्य से आपने "श्री कुण्डलिनी सिद्धि मंत्र साधना" शीर्षक से एक पुस्तक के प्रकाशन की योजना बनाई है।

कुण्डलिनी जागरण का प्राचीन भारतीय अध्यात्म-विद्या के अंतर्गत योग साधना के क्षेत्र में विशिष्ट महत्व रहा है। किसी भी साधक के लिए विशेषकर योग साधना में कुण्डलिनी जागरण को साधना मार्ग का एक बुनियादी सोपान माना गया है। योग अष्टाध्यायी के रचयिता महर्षि पतंजलि के अनुसार कुण्डलिनी जागरण के उपरांत ही षटचक्र भेदन का मार्ग साधक के लिए प्रशस्त होता है और साधक अपने अन्तिम लक्ष्य निर्विकल्प समाधि तक पहुँच पाता है।

ऐसे दुरुह विषय की सरल भाषा में व्याख्या से युक्त पुस्तक का प्रकाशन निश्चय ही उन जिज्ञासुजनों के लिए यथेष्ठ उपादेय सिद्ध होगा, जो साधना मार्ग में प्रवृत्त होने को उत्सुक हैं।

मैं आपके इस प्रयास की सफलता की कामना करता हूँ।

सद्भावी
हरिशंकर भाभड़ा

ब्रह्म शक्ति माँ कुण्डलिनी की सम्मोहिनी दृष्टि

मनुष्य देह में गुरु शक्ति की क्रिया के प्रभाव से अणुरूपी जीव की शिवमय शक्ति सुप्त अवस्था से जागृत-अवस्था में उत्थित होती हैं एवं जीव भाव को क्रमशः शिव भाव में परिणत करती है। जीव भाव की निवृति होकर शिव भाव का उदय होना ही षटचक्र-भेदन कुण्डलिनी जागरण का रहस्य है। शिव की शक्ति चिद्‌रूप होने पर भी जीव देह में वह मूलाधार कुण्ड में अचिद्‌रूप से सोई हुई रहती है, एवं जीव को अपने शिव स्वरूप का अनुभव नहीं करने देती। देहाध्यास और स्वरूप का आवरण तथा अनात्मपरकीय रस का ग्रहण ही इसका कारण है। पंच भौतिक तत्व तथा चित्त ये छः केन्द्र रूप में रहकर छः चक्रों का निर्माण करते हैं। ये छः चक्र निरन्तर चक्कर लगाकर शुद्ध आत्मा को जीव भाव रूप में घुमा रहे हैं तथा परावाक से पश्यन्ति, मध्यमा और बैखरी वाणियों की आवरण शक्ति ही जीव को जन्म-मरण चक्र में घुमा रही है।

सतगुरु कृपा से कुण्डलिनी के जागरण से चैतन्य पुनः अपने स्वरूप में प्रतिष्ठित होता है तब वास्तव में जीव को किसी नूतन वस्तु की प्राप्ति नहीं होती। उसको अपने स्वभाव सिद्ध शिवमय स्वरूप ही की पुनः प्राप्ति होती है। यह प्राप्ति ही अपने शुद्ध स्वरूप की अपरोक्षानुभूति है और यही सिद्ध पुरुषों की जीवन्मुक्ति है।

इस अद्भुत रहस्यमयी कार्य के उद्घाटन के लिए श्री प्रकाश नाथ तन्त्रेश द्वारा लिखित पुस्तक "श्री कुण्डलिनी सिद्धि मंत्र साधना "एक सराहनीय प्रयत्न है। जिज्ञासु पाठक एवं साधक इस ग्रन्थ का समुचित आदर करेंगे और इस ग्रंथ से लाभ उठायेंगे। इस ग्रन्थ का अधिक से अधिक प्रचार-प्रसार हो, यही मंगल कामना है।

तत्वदर्शी सनातनी
बुद्धि प्रकाश देव उपाध्याय
ब्यावर

चक्र परिचय

हमारे शरीर में कई स्थानों पर बहुत ही सूक्ष्म नाड़ियों के गुच्छे हैं और वहाँ ग्रन्थियाँ भी हैं। प्राच्य-विद्या योग एवं तन्त्र के ग्रन्थों में इन्हें कमल या चक्र कहते हैं। यह चक्र या कमल कितने हैं ? इनकी संख्या निर्धारण करने में विद्वानों में मतभेद हैं। 'विलय तन्त्र' में इडा और पिंगला की विद्युत गति से उत्पन्न उलझे गुच्छकों को चक्रों की संज्ञा दी गई है और उनकी संख्या पाँच बताई गई है। मेरूदण्ड में पाँच की संख्या में हैं। मस्तिष्क के अग्रभाग में अवस्थित आज्ञा, आज्ञा चक्रको भी उसमें शामिल कर लेने पर वे छह हो जाते हैं और हठयोग की गणना के अनुसार छः की संख्या पूरी हो जाती है।

चक्रों की संख्या सूक्ष्म शरीर में बहुत बड़ी है। इन्हें १०८ तक गिना गया है। छोटे होने के कारण उन्हें उपत्यका कहा गया है और जपने की माला में उतने ही दाने रखे जाने की परम्परा चली है। इनमें से कितने ही लघु चक्र ऐसे हैं जिन्हें जागृत करने वालों ने प्रख्यात चक्रों से भी अधिक शक्तिशाली पाया है। चन्द्रमा की गणना ग्रहों में नहीं उपग्रहों में होती हैं, फिर भी अपनी पृथ्वी के लिये पूर्ण समझे जाने वाले ग्रहों में कम नहीं अधिक ही उपयोगी हैं।

तन्त्र ग्रन्थों में ऐसे चक्रों का वर्णन हैं जिनके नाम और स्थान षट्चक्रों से भिन्न हैं। जहाँ उनकी संख्या पाँच बताई गई

वहाँ पाँच कोश नहीं वरन् भिन्न आकृति प्रकृति के अतिरिक्त चक्रों का वर्णन है—१. त्रिकुटा २. श्री हाठ ३. गोल्लाक ४. औट पीठ ५ भ्रमर गुफा—इनके नाम हैं। इनकी व्याख्या पाँच प्राण एवं पांच तत्वों की विशिष्ट शक्तियों के रूप में की गई है। इनके स्थान एवं स्वरूप हठयोग में वर्णित षट्चक्रों से अलग हैं।

इसी तरह कहीं-कहीं तन्त्र ग्रन्थों में उनकी संख्या छः से अधिक बताई गई है—

नव चक्रं कला धारं त्रिलक्ष्यं व्योम पंचकम्।
सम्यगेतन्न जानति स योगी नाम धारकः॥

"सिद्ध सिद्धान्त पद्धति"

अर्थात—नव चक्र, त्रिलक्षं, सोलह आधार, पाँच आकाश वाले सूक्ष्म शरीर को जो जानता है, उसी को योग में सिद्धि मिलती है।

अष्टाचक्रा नवद्वारा देवानां पूरयोध्या।
तस्यां हिरण्यमयः कोशः स्वर्गोज्योतिषावृतः॥

"अथर्ववेद"

अर्थात—आठ चक्र, नव द्वार वाली यह नगरी स्वर्ण कोश और स्वर्गीय ज्योति से आवृत है।

"शक्ति सम्मोहन तन्त्र" में उनकी संख्या नौ मानी गई है। कुण्डलिनी को 'नव चक्रातिमका देवी' कहा गया है। नौ चक्रों के नाम इस प्रकार हैं—

१. आनन्द चक्र
२. सिद्धि चक्र
३. आरोग्य चक्र
४. रक्षा चक्र
५. सर्याथ चक्र
६. सौभाग्य चक्र

७. संशोक्षण चक्र ८. शाप चक्र
९. मोहन चक्र।

यह नामकरण इनकी विशेषताओं के आधार पर किया गया है। ये कहाँ है, इसकी चर्चा में केवल तीन को षट्चक्रों की तरह बताया गया है और शेष को विभिन्न स्थानों पर अवस्थित बताये गये हैं।

नौ चक्रों के वर्णन में भी नाम और स्थानों की भिन्नता मिलती है। एक स्थान पर उनके नाम इस प्रकार गिनाये गये हैं—

१. ब्रह्म चक्र २. स्वाधिष्ठान चक्र
३. नाभि चक्र ४. हृदय चक्र
५. कण्ठ चक्र ६. तालु चक्र
७. भ्रू चक्र ८. निर्वाण चक्र
९. आकाश चक्र।

यह उल्लेख सिद्ध सिद्धान्त पद्धति में विस्तार पूर्वक प्राप्त होता है।

इस प्रकार चक्रों के विषय में हमें विभिन्न मत प्राप्त होते है। अधिकांश विद्वानों के मतानुसार शरीर में छः कमल माने गये हैं, ये ही षट्चक्र हैं। सातवाँ चक्र सहस्रार है, जो कि ईश्वरीय प्रकाश या शक्ति पुंज हैं। ये चक्र मेरुदण्ड (रीढ़ की हड्डी) के भीतर ब्रह्म नाड़ी में होते हैं। मेरुदण्ड तैंतीस अस्थि खण्डों के जुड़ने से बना है। हो सकता है, इस तैंतीस की संख्या का सम्बन्ध तैंतीस कोटि देवताओं अथवा प्रजापति, इन्द्र, अष्ट वसु, द्वादश आदित्य और एकादश रुद्र से हो। अन्दर से यह खोखला रहता है। इसका नीचे का भाग नुकीला और छोटा होता है। इस नुकीले स्थान के आस-पास का भाग 'नाड़ी कंद'

कहलाता है, इसी नाड़ी कन्द में 'महाशक्ति कुण्डलिनी' का निवास होता है।

स्वस्थ और पूर्ण मानव शरीर में बहत्तर हजार नाड़ियाँ हैं। जिनमें चौदह मुख्य हैं और इनमें भी इड़ा, पिंगला और सुषुम्ना तीन प्रधान हैं। इडा मेरुदण्ड के बाहर बायीं ओर से और पिंगला दाहिनी ओर से लिपटी हुई हैं। सुषुम्ना नाड़ी मेरुदण्ड के अन्दर कन्द भाग से प्रारम्भ होकर कपाल में स्थित सहस्रदल कमल तक जाती है। जिस प्रकार कदली स्तम्भ में एक के बाद दूसरी परत होती है, उसी प्रकार सुषुम्ना के भीतर क्रमशः वज्रा, चित्रिणी तथा ब्रह्म नाड़ी के द्वारा कपाल में स्थित ब्रह्म रन्ध्र (जिस स्थान पर खोपड़ी की विभिन्न हड्डियाँ एक स्थान पर मिलती हैं और जिसके ऊपर शिखा रखी जाती है। जाकर पुनः लौट आती हैं। मेरुदण्ड स्थित प्रत्येक कमल के भिन्न संख्या में दल हैं और प्रत्येक के रंग भी भिन्न हैं। ये छः चक्र शरीर के जिन अवयवों के नाम से पुकारे जाते हैं। इनके अन्य नाम भी हैं। अस्तु यहाँ षट्चक्रों के विषय में नाथ सिद्ध अवधूत अमृतनाथ जी महाराज के अनुभवामृत प्रस्तुत करते हैं—

१. मूलाधार चक्र : प्रथम कमल

मानव शरीर में स्थित चक्रों में नीचे से ऊपर की ओर यह प्रथम चक्र है। शेष सब चक्रों (कमलों) का मूल आधार (स्थिति का मूल कारण) होने में इस चक्र की मूलाधार की संज्ञा हुई अर्थात् सब चक्रों के मूल (जड़) में यह चक्र हैं।

मूलाधार चक्र का नाम ही आधार चक्र है। यह चक्र गुदा प्रदेश में स्थित है। इस आधार कमल के चार दल पंखुड़िया हैं, इसका रंग लाल है और गणपति इसके प्रधान देवता हैं। इस

आधार चक्रकी पवित्रता, चैतन्यता, ऊर्ध्वमुखता से ही समस्त शरीर की शुद्धता, जागृति, स्वास्थ्य, बल और बुद्धि की वृद्धि और स्थिरता है। इसका आकार हाथी की सूंड के समान है। इस चक्र का काम शरीरस्थ व्यर्थ मल को विसर्जित करना है। योग शास्त्र, आयुर्वेद तथा शरीर के विज्ञान के अनुसार शरीर के मल का उचित रूप में विसर्जन होना अति आवश्यक है। इससे शरीरस्थ सात धातु शुद्ध और पर्याप्त रूप से उत्पन्न और पुष्ट होते हैं। आधार चक्र की अशुद्धता से समस्त शरीर मलिन हो जाता है। इसी चक्र में नीचे मुखकर कुण्डलिनी महानिद्रा में सोती रहती हैं। इस आधार चक्र में शंखिनी और वज्रा नाम की दो नाड़ियाँ हैं। इस कमल के चार दल हैं, इन दलों पर—व, श, ष, स चार वर्ण अंकित हैं, आशय यह है कि इस स्थान से स्वास्थ्य, बल, बुद्धि क्षौर स्वच्छता की प्राप्ति होती है। इन चारों से ही समस्त शरीर के धातु, चैतन्य-शक्ति और उपधातुओं को इन गणों का बल प्राप्त होता है, इस कारण इस कमल के स्वामी का नाम गणपति है। यह चक्र पाचन शक्ति को ठीक रखता है।

२. स्वाधिष्ठान चक्र : द्वितीय कमल

स्वाधिष्ठान चक्र लिंग स्थान में हैं। इसका वर्ण पीला है और इस कमल में छः दल हैं। इस चक्र में कृकल नाम की नाड़ी और इसी नाम की वायु है। इस का काम मूत्र विसर्जन है। जिस तरह मल विसर्जन जीवन का मूल है, उसी प्रकार मत्र विसर्जन भी जीवन का आधार है। यह पुरुषों के वीर्य और स्त्रियों के रज का स्थान है। रज-वीर्य से सन्तान उत्पत्ति होती है, प्रजा की उत्पत्ति होती है, इसीलिये इस चक्र के अधिष्ठाता प्रजापति ब्रह्मा हैं। इस चक्र पर ब, भ, म, य, र, ल छः वर्ण

अंकित है। इस चक्र की साधना से धैर्य, विवेक, बल, क्षमता, विश्वास और दृढ़ता की प्राप्ति होती है। गृहस्थ को इस चक्र की साधना से सुन्दर, बलवान, बुद्धिमान और आध्यात्मिक वृत्तिवाली संतान की प्राप्ति होती है।

३. मणिपूरक चक्र : तृतीय कमल

मणिपूरक चक्र का स्थान नाभि देश है। यह कमल नीले रंग का है और दस दल का है। इस कमल में प्रधान नाड़ियाँ इड़ा पिंगला और इनके बीच में सुषुम्ना नाड़ी हैं। इस कमल में समान वायु का निवास है। समस्त शरीर को इसी स्थान से पोषण मिलता है। इसके अधिष्ठाता विष्णु हैं। समान वायु हृदय से प्राण और गुदा से अपान का आकर्षण करती है। प्राण और अपान के मिलने का नाम श्वांस है। यही प्राण-अपान का मेल-श्वांस नाभि कमल से मेरुदण्ड होता हुआ शिखर में पहुंचता है तथा तत्वों की गति के अनुसार (आकाश तत्व की प्रधानता में श्वांस बाहर नहीं आता, वायु की प्रधानता में बारह अंगुल, अग्नि की प्रधानता में चार अंगुल, जल की प्रधानता में सोलह अंगुल और पृथ्वी तत्व की प्रधानता में आठ अंगुल की मात्रा में) नासिका द्वारा बाहर आता है। समस्त ब्रह्माण्ड में व्यापक महाप्राण और पिण्ड-शरीर में स्थित अल्प प्राण की नाभि मूल में एक गाँठ पड़ी है, जिस समय यह ग्रन्थि खुल जाती है, उसी समय श्वांस-प्रश्वांस की गति रुक जाती है और शरीर मृतक हो जाता है। मनुष्य के शरीर में ९२ करोड़ श्वांस का स्थान हैं। आहार-विहार के उचित रहने और श्वांस के समगति में चलते रहने से इतने श्वांस मनुष्यों को आ सकते हैं। अधिक निद्रा लेने वाले, वीर्य नष्ट करने वाले, धातु-उपधातुओं की भस्म तथा उष्ण पदार्थ खाने वाले,

इन्द्रिय लोलुप और चटोरे मनुष्य के श्वांस शीघ्र ही समाप्त हो जाते हैं। सुषुम्ना नाड़ी अनुचित आघात से जर्जर हो जाती है, मनुष्य मृत्यु को प्राप्त हो जाता है। यदि श्वांस शेष रहते हैं तो फिर मनुष्य शरीर प्राप्त होता है। जितने ही श्वाँस रहते है उतने ही लेने में मृत्यु हो जाती है। यही कारण है कि अल्पायु में अनेक मृत्यु होती हैं। महान् आत्माओं के लिए यह बात नहीं है, वे तो नैमित्तिक शरीर वाले होते हैं, कार्य समाप्त होते ही शरीर त्याग देते हैं। मणिपूरक चक्र कमल में दस दल-पंखुरी हैं। इस कमल में मनरूपी भ्रमर निवास करता है, यह समय-समय पर विभिन्न-दलों पर भ्रमर करता है और तदनुसार इच्छायें उत्पन्न होती हैं। इस कमल के दस दलों पर ड, ढ, ण, त, थ, द, ध, न, प, फ वर्ण अंकित रहते हैं। इस चक्र की साधना से शांति, आनन्द, धृति, समता, निर्मोहता, वैराग्य, तन्मयता, निश्चलता, एकांतप्रियता और उदासीनता प्राप्त होती है।

४. अनाहत चक्र : चतुर्थ कमल

अनाहत चक्र का स्थान हृदय है। यह बारह दल का कमल है। इसका रंग सफेद है और क, ख, ग, घ, ङ, च, ज, झ, ञ, ट, ठ—ये बारह वर्ण दलों पर यथा क्रम अंकित रहते हैं। इस चक्र की दक्षिण दिशा में हृदय और वाम दिशा में पाक स्थान मेदा है, जो सभी आहार का पाचन करता है। इस स्थान के अधिपति शिव हैं। यहाँ प्राण वायु का निवास है, जो समस्त शरीर का पोषण और रक्षण करती है। इस चक्र की साधना सिद्धि से निर्लोभता, प्रेम, सत्यता, सावधानता, समदर्शिता, अहिंसकता, वात्सल्य, विवेकशीलता, जिज्ञासुता, दया, क्षमा और करुणा की शक्ति प्राप्त होती है।

५. विशुद्ध चक्र : पंचम कमल

विशुद्ध चक्र का स्थान कण्ठ है। इसका वर्ण श्याम है और इसके सोलह दल हैं। इन पर—अ, आ, इ, ई, उ, ऊ, ऋ, ॠ, लृ, लॄ, ए, ऐ, ओ, औ, अं, अ: स्वर अंकित हैं। इस कमल का अधिष्ठाता जीव है। इस कमल का छेदन होने पर तत्काल मृत्यु हो जाती है। इसकी साधना सिद्धि से सोलह प्रकार के योग के साधन की शक्ति आ जाती है।

६. आज्ञा चक्र : षष्ठं कमल

आज्ञा चक्र का स्थान भ्रूमध्य त्रिकुटी है। इसका रंग लोहित है। इसमें दो दल हैं और उन पर ह और क्ष दो वर्ण यथा क्रम अंकित हैं। इस कमल की दक्षिण तरफ गान्धारी और हस्तिनी नाड़ी हैं। इन दोनों नाड़ियों का कार्य नेत्रों को प्रकाश देना है। यह चक्र ज्ञानेन्द्रियों का केन्द्र है। इस पर प्रकृति, पुरुष, माया, ब्रह्म का संयोग है। यह ज्ञान प्रदान करने वाली ज्योति का भण्डार है। शरीर के वाम भाग से इडा, दक्षिण से पिंगला तथा ऊर्ध्व भाग से सुषुम्ना नाड़ी आकर मिलती है। इसी कारण इसे त्रिकुटी या त्रिवेणी कहते हैं। इस चक्र की साधना सिद्धि से वृत्तियाँ अन्तर्मुखी होती हैं। मन की चंचलता मिटती है। नेत्रों का प्रकाश बाहर भीतर के अंगों को देख सकता है। अन्त: प्रदेश की समस्त रचना देखी जाती है, भ्रान्ति नष्ट हो जाती है। आत्म तत्व में स्थिरता आती है।

७. सहस्रार चक्र : सप्तम् चक्र

सहस्र दल कमल सहस्रार का स्थान मस्तिष्क है। इसके सहस्र दल हैं। इसका रंग धूम्र के समान है। यह समस्त प्रकार

के ज्ञान की उत्पत्ति का स्थान है। इसमें सद्गुरु का निवास है, ज्ञानदाता गुरु ही हैं। समस्त शरीर का संचालन केन्द्र मस्तिष्क है। यहाँ से समस्त प्रकार की आज्ञा प्रचारित होती है। प्रत्येक इन्द्रिय इसकी आज्ञा के अनुसार कार्य करती है। वर्णमाला के समस्त आवश्यक वर्ण इसके दलों पर विराजमान हैं। यह स्थान ब्रह्म स्थान, गुरु स्थान, शिखर लोक, अमर लोक, भ्रमर गुफा, शिव स्थान, मुक्ति स्थान, अमृत लोक आदि अनेक नामों से विख्यात हैं। नाभि कमल से उठे श्वांस का विश्राम स्थान है। महाशक्ति कुण्डलिनी मूल कमल आधार चक्र से जागृत होकर इसी शिखर में प्रवेश करती है, तभी साधक को जीवन्मुक्त अवस्था की प्राप्ति होती है। इस कमल में वृत्ति के लय से संसार सपने के समान मिथ्या प्रतीत होता है। द्वैत का नाश होकर अद्वैत भाव की स्थापना होती है। पिण्ड-ब्रह्माण्ड का रूप एक हो जाता है। संसार अपने रूप में अभिव्यक्त दीख पड़ता है। अपने रूप के अतिरिक्त कुछ भी शेष नहीं रहता। इस स्थान से सदा अमृत का स्राव होता रहता है। जिस समय अमृत स्राव बन्द हो जाता है, उस समय शरीर मृत्यु को प्राप्त हो जाता है। यह स्थान शरीर की सभी धमनियों का अन्तिम स्थान है। यह शरीर रूपी वृक्ष का मूल है, यह अमृत का ऊर्ध्वमुख कूप है, जिसमें सुरति रूप पनिहारी रात-दिन पानी भरती रहती है। जिन सौभाग्यशाली आत्माओं की वृत्ति बिना साधन किये ही इसमें लीन हो जाती है, वे धन्य हैं। इस स्थान पर वृत्ति, सुरति का स्थिर हो जाना ही निर्विकल्प या सहज समाधि है।

———

सप्त चक्र निरूपण

यों कुण्डलिनी प्रसंग में बार-बार षट्चक्रों का ही प्रसंग आता है, पर वे वस्तुतः सात हैं। सातवाँ चक्र सहस्रार चक्र कहलाता है। इसे चक्रों की श्रृंखला में न जोड़ने पर विवाद हैं। सहस्रार-परम चक्र है। इसे इसी श्रेणी में शामिल रखने के दोनों पक्षों के साथ तर्क हैं। इसलिए जहाँ छः चक्र की गणना है, वहाँ सात का भी उल्लेख बहुत स्थानों पर हुआ है। सहस्रार चक्र को इस चक्र श्रृंखला से अलग नहीं किया जा सकता। प्रत्येक चक्र भी सात आधारों पर बना है। उनके स्वरूप निर्धारण की जो व्याख्या विवेचना है, उसमें प्रत्येक के सात-सात विवरण दिये गये हैं—१. तत्व बीज २. वाहन ३. अधिदेवता ४. दल ५. यंत्र ६. शब्द ७. रंग। इन्हीं विशेषताओं की भिन्नता से उनके अलग-अलग विभेद किये गये हैं। अन्यथा बाहर से तो उनकी प्रकृति एक जैसी ही है। उनकी क्षमताओं, विशेषताओं और प्रतिक्रियाओं का विवरण सात संकेतों के रूप में समझा जा सकता है।

शरीर एक समूचा ब्रह्माण्ड है। जो कुछ इस विस्तृत ब्रह्माण्ड में है, उसे बीज रूप में मानवी पिण्ड में संजो दिया गया है। साधना द्वारा इन बीजों को अंकुरित और पल्लवित किया जाता है। ब्रह्माण्ड और पिण्ड की सत्ता एक जैसी बतलाते हुये कहा गया है—

ब्रह्माण्ड सन्तके देहे यथा देशं व्यवस्थितः।

शिव संहिता में यह शरीर ब्रह्माण्ड संज्ञक है। जो ब्रह्माण्ड में है वही इस शरीर में भी स्थित है।

पर्वत, नदी, समुद्र, द्वीप आदि सात-सात ही बताये गये हैं। भूगोल के हिमालय से इनकी संगति नहीं वैठती। संसार में हजारों नदियाँ हैं। इसी तरह पर्वत भी सैकड़ों हैं। पृथ्वी पर द्वीप पाँच हैं। छोटे द्वीपों की संख्या तो लाखों तक पहुंचेगी। समुद्र भी सात कहा है। इस प्रकार भौगोलिक गणना के आधार पर यह ब्रह्माण्ड विवरण सही नहीं बैठता। पर पिण्ड ब्रह्माण्ड की प्रमुख शक्तियों को इन रूपों के माध्यम से समझाने वाले अलंकारिक संकेत का रहस्य समझा जा सके तो यह सभी सप्तक सही वैठते हैं सात पर्वत ये हैं—१. विद्रुम २. हिमशैल ३. द्युतिमान ४. पुष्पवान ५. कुशेशय ६. हरिशैल ७. मंदराचल।

सात नदियों के नाम है—१. जलधर २. देवत ३. श्यामक ४. उद्रक ५. अम्बिकेय ६. रभ्य ७. केशरी।

सात चक्रों का सप्त अग्नियों तथा सोम संस्थाओं के नाम ब्राह्मण ग्रन्थों में इस प्रकार बताये गये हैं—१. आत्माग्नि स्टोम २. अष्टवक्य ३. थोडसी ४. बाजपेयक ५. अति रात्र ६. आप्त ७. याम।

अग्नि पुराण में सात चरु यज्ञ एवं सात हवि यज्ञों का वर्णन है। चरू यज्ञ है—१. पुरोष्टक २. पार्वण ३. श्रावणी ४. अग्रहायणी ५. चैत्र ६. अश्व ७. युजी।

हवि यज्ञ भी सात हैं—१. अग्न्याधेय २. अग्निहोत्र ३. दर्श ४. पौर्णमास ५. चातुर्मास्य ६. आग्रहायण ७. निरूढ़।

सात अग्नि इस प्रकार गिनाई गई हैं—

१. ब्रह्माग्नि २. आत्माग्नि ३. योगाग्नि ४. कालाग्नि ५. सूर्याग्नि ६. वैश्वानर ७. आतप।

मुण्डक उपनिषद के अनुसार अग्नि देव की सात जिह्वायें हैं—१. काली २. कराली ३. मनोजवा ४. लोहिता ५. धूम्रवर्णा ६. स्फुलिंगिनी ७. विश्वरुचि।

मार्कण्डेय पुराण में सात समुद्रों तथा सात द्वीपों के नाम इस प्रकार बताए गए हैं—

समुद्र—१. लवण सागर २. इक्षु सागर ३. सुरा सागर ४. दुग्ध सागर ५. दधि सागर ६. घृत सागर ७. घृत सागर।

द्वीप—१. जम्मू द्वीप २. प्लक्ष द्वीप ३. श्यालमलि द्वीप ४. कुश द्वीप ५. क्रौंच द्वीप ६. शाक द्वीप ७. पुष्कर द्वीप।

इन सभी प्रतिपादनों में यह संकेत है कि हर स्तर की क्षमता बीज रूप से अपने भीतर विद्यमान है। यदि इन्हें जाग्रत करने का प्रयत्न किया जाये तो व्यक्ति उच्च स्तरीय स्थिति तक निरन्तर बढ़ता चल सकता है और विकास के उच्च स्तर तक पहुंच सकता है। बीज का अस्तित्व और फल का परिणाम सुनिश्चित है। आवश्यकता उस कृषि कार्य की बागवानी की रीति नीति जानने अपनाने की है जिसे आध्यात्म भाषा में साधना कहते हैं।

प्राणायाम मन्त्र में गायत्री के साथ सात व्याहृतियों का प्रयोग होता है। भू, भुवः, स्वः, महः, जनः, तपः, सत्यम्। ये सात व्याहृतियाँ हैं। इन्हें सात ऋषि एवं सात लोक भी कहा जाता है।

अग्नि पुराण में सात ऋषियों के नाम इस प्रकार बताये गए हैं—

वशिष्ठः काश्यपोऽतथात्रिर्जमदग्निः स गौतमः विश्वामित्र भरद्वाजो मुनयः सप्त साम्प्रतम् ।

१. वशिष्ठ २. कश्यप ३. अत्रि ४. जमदग्नि ५. गौतम ६. विश्वामित्र ७. भारद्वाज।

इन सातों की सत्ता सप्त चक्रों में विद्यमान है। इन सातों की शक्ति इन्द्रियों के रूप में भी दृष्टिगोचर होती है।

प्राणाः वा ऋषयः। इमौ एवं गौतम भरद्वाजौ। अजयमेव गौतमः अयं भारद्वाजः। इमौ एव विश्वामित्र जमदग्नि। अजमेव विश्वामित्रः अयं जमदग्निः। इमौ एवं वशिष्ठ कश्यपौ अयमेव वशिष्ठः अयं कश्यपः वागेवात्रि। —श्रुति

सात प्राण हैं, सात ऋषि हैं। दो कान गौतम और भारद्वाज हैं। दो आँखें विश्वामित्र और जमदग्नि हैं। दो नासिका छिद्र वशिष्ठ और कश्यप हैं। वाक अत्रि हैं।

सात लोक आत्म सत्ता में सप्तचक्रों के रूप में विद्यमान हैं। "महायोग विज्ञान" में कहा गया है—

मूलाधारे तु भूर्लोको स्वाधिष्ठाने भुवस्ततः स्वर्लोको नाभि देशे च हृदये तु महस्तथा। जनः लोके कंठ देशे, तपो लोक ललाटके सत्यलोकं महारन्ध्रे इति लोके पृथक्-पृथक्।

१. भूलोक मूलाधार में। २. भुवः लोक स्वाधिष्ठान में। ३. स्वः लोक नाभि स्थान में ४. महलोक हृदय में ५. जनः लोक कण्ठ में ६. तप लोक ललाट में ७. सत्यलोक ब्रह्मरन्ध्र में विद्यमान है। जहाँ स्थान मात्र गिना दिये गए हैं वहाँ उन

स्थानों पर अवस्थित चक्रों का ही संकेत समझा जाना चाहिये।

उपनिषदकार ने इस मानव देह को 'छह अरे' और सात चक्र लगा हुआ विलक्षण रथ कहा है। यह षटचक्रों का सप्त चक्रों का ही संकेत है—

"ऊथेमे अन्य उपरे विलक्षणं सप्त चक्रे शव्दर आहुर्पितम्।"

अन्य लोक उस विलक्षण को सात चक्र और छह अरों वाला कहते हैं।

अतः षट् चक्र नाम भ्रामक है। वस्तुतः इसे सप्तचक्र कहना चाहिये।
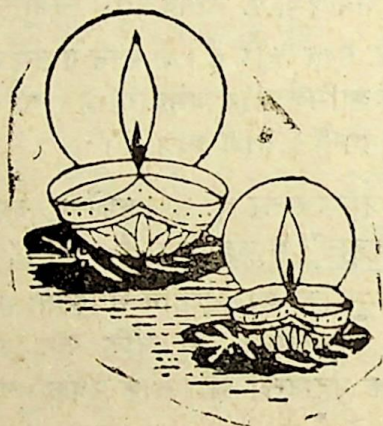
श्री कुण्डलिनी महिमा

वेद-वर्णित जगद्व्यापिनी आद्याशक्ति ही ब्रह्मशक्ति है। अनन्त कोटि ब्रह्माण्डमय दृश्य-प्रपंच उसी ब्रह्म शक्ति का विलास है। शास्त्रों में इसे देवी, महादेवी, शिवा, प्रकृति, भद्रा, रुद्रा, नित्या, गौरी, धात्री तथा शक्ति आदि अनेक नामों से वर्णित किया गया है। शास्त्रों में इन प्राणशक्तियों की केन्द्रीभूत शक्ति को देवी—"कुण्डलिनी" कहा गया है। पर्वत, वन, समुद्र आदि धारण करने वाली धरित्री का आधार जैसे अनन्त नाग है, उसी प्रकार शरीरस्थ समस्त गति और क्रिया शक्ति का आधार 'श्री कुण्डलिनी महाशक्ति' है। समस्त शक्ति एक स्थल में कुण्डली मारकर सर्पवत् बैठी रहती है, इसलिए इसका नाम कुण्डलिनी शक्ति है। यह शक्ति मातृगर्भस्थ सन्तान में जाग्रत रहने पर भी सन्तान के जन्म लेते ही निद्रित सी हो जाती है। मुमुक्ष साधक आत्म कल्याण के निमित्त इस कुण्डलिनी शक्ति को सुषुम्ना नाड़ी के द्वारा ऊर्ध्वगति वाली करके क्रम से षट्चक्र भेदन द्वारा सहस्रार में ले जाने के लिए प्रयासरत रहता है। जब वह इस प्रकार करने में समर्थ हो जाता है, तब उसका दिव्य नेत्र खुल जाता है और दिव्य ज्ञानशक्ति के बल से वह अपने स्वरूप को देखकर कृत-कृत्य हो जाता है—जन्म मृत्यु के कष्ट से मुक्त हो जाता है।

श्री कुण्डलिनी शक्ति का प्रसंग योग वाशिष्ठ, योग चूड़ा-

मणि, देवी भागवत, शारदा तिलक, शाण्डिल्योपनिषद, हठ योगप्रदीपिका, कुलार्णव तंत्र, योगिनी तंत्र, बिन्दुपनिषद, रुद्रयामल तन्त्र, सौन्दर्य लहरी, लिंग पुराण, अग्नि पुराण आदि ग्रंथों में विस्तार पूर्वक दिया गया है। श्री कुण्डलिनी शक्ति की महिमा का बखान अनेक ग्रन्थों ने किया, इन्हीं का सार रूप हम यहाँ प्रस्तुत कर रहे हैं—

ऋग्वेद में ऋषि कहते हैं—"हे प्राणाग्नि ! मेरे जीवन में ऊषा बनकर प्रकट हो और अज्ञान का अन्धकार दूर करो, ऐसा बल प्रदान करो जिससे देव शक्तियाँ खिची चली आयें।"

त्रिशिखिब्रह्मोपनिषद में शास्त्रकार ने कहा है—"योग साधना द्वारा जगाई हुई कुण्डलिनी बिजली के समान तड़पती और चमकती है। उससे जो सोया है, सो जागता है। जो जागता है, वह दौड़ने लगता है।

महातन्त्र में वर्णन आता है—"जाग्रत हुई कुण्डलिनी असीम शक्ति का प्रसव करती है। उससे नाद, बिन्दु, कला के तीनों अभ्यास स्वयंमेव सध जाते हैं। परा, पश्यन्ति, मध्यमा और वैखरी चारों वाणियाँ मुखर हो उठती हैं। इच्छा शक्ति, ज्ञान शक्ति और क्रिया शक्ति में उभार आता है। शरीर-वीणा के सभी तार क्रमबद्ध हो जाते हैं और मधुर ध्वनि के बजते हुए अन्तराल को झंकृत करते हैं। शब्द ब्रह्म की यह सिद्धि मनुष्य को जीवन्मुक्त कर देवात्मा बना देती है।"

महायोग विज्ञान में कहा गया है—"जिसकी मूलाधार शक्ति सो रही है, उसका सारा संसार सो रहा है। जिसकी कुण्डलिनी जगी, समझना चाहिए कि उसका भाग्य जग गया।"

त्रिपुरा तन्त्र में लिखा गया है—"जो देवता भोग देते हैं वे मोक्ष नहीं देते, जो मोक्ष देते हैं, वे भोग नहीं देते। किन्तु कुण्डलिनी दोनों को ही प्रदान करती है।"

योगिनी तन्त्र में लिखा है—"कुण्डलिनी के जगते ही अन्तराल में छिपा वैभव अनायास ही दृष्टिगोचर होने लगता है।"

महातन्त्र में उल्लेख है—"जिसकी कुण्डलिनी जागती है उसकी वैखरी, मध्यमा, परा और पश्यन्ति वाणियाँ जाग्रत हो जाती हैं। उसका कथन सत्य होकर रहता है।"

महाभारत का सुप्रसिद्ध आख्यान है कि भीष्म पितामह दक्षिणायन सूर्य रहने पर मरना नहीं चाहते थे। उनकी इच्छा उत्तरायण समय आने पर मरने की थी। इसके लिए उन्होंने देवयान को परलोक प्रयाण का मार्ग चुना। इस प्रसंग में भी कुण्डलिनी प्रसंग है। दक्षिणायन कुण्डलिनी अग्नि है और उत्तरायण ब्रह्मरन्ध्र ऊर्जा। देवयान मेरूदण्ड मार्ग है। भीष्म की कुण्डलिनी जागरण की प्रक्रिया अधूरी थी। वे उसी को पूरा करने में शर-शैय्या पर पड़े-पड़े प्रयास करते रहे, उद्देश्यपूर्ण होने पर उन्होंने शरीर का त्याग किया।

अथर्ववेद में कहा गया है कि—"हे आत्माग्नि! तेरे द्वारा प्रकाश, तेज, बल, प्रतिभा, पराक्रम, ओजस सभी मेरे भीतर से उभर रहे हैं। हे अग्नि, तेरे तैंतीस विभाग मेरे ऊपर अनुग्रह करें।"

यजुर्वेद में कहा गया है—"हे दिव्य अग्नि! तू आयु, वर्चस सुसंतति, धन, मेधा, रति, पौरुष बनकर हमें अपना अनुग्रह प्रदान कर।

वृहज्जाबालोपनिषद का कथन है कि—"यह कालाग्नि

कुण्डलिनी जब अधोगामी होती है तो मनुष्य को अशक्त बना देती है। पर जब वह ऊपर उठती है तो उच्च सिद्धियों को प्रदान करती हुई ब्रह्मलोक तक पहुँचती है।

कौलामृत में लिखा है—"यह कुण्डलिनी शक्ति अग्नि रूप है। कोटि सूर्य के समान चमकती है। वह परम शक्ति है। विश्व में विस्तृत विहार करती है।

योग कुण्डल्युपनिषद का कथन है—"कुण्डलिनी मूलाधार चक्र में स्थित आत्माग्नि तेज के मध्य में अवस्थित है। वह जीव की जीवनी शक्ति है, तेजस और प्राणाकार है।

कुण्डलिनी जब जाग उठती है

जब कुण्डलिनी जाग उठती है, तो वह षट्चक्रों का भेदन करती है। शिव से मिलने के लिए जाते हुए मार्ग में शरीर के भीतर एक-एक करके सब भूत (तत्व) लय होते हैं, एक-एक भूत लय होने पर कांति बदलती है, साधक को उस स्थान में कैसी-कैसी सिद्धियाँ प्राप्त होती हैं और किस प्रकार जीव ब्रह्म एक होता है—आदि बातों का बहुत ही सुन्दर वर्णन महाराष्ट्र के सर्वश्रेष्ठ नाथ पंथ के कवि योगीराज सन्त श्री ज्ञानेश्वर (ज्ञाननाथ) ने 'गीता ज्ञानेश्वरी' के छठे अध्याय में किया है।

इसके अतिरिक्त इसी अध्याय में उन्होंने कुण्डलिनी योग का बहुत विस्तृत तथा उत्तम काव्यमय वर्णन किया है। यह वर्णन करते हुये उन्होंने लिखा है कि हम जिस रहस्य का वर्णन कर रहे हैं, वह गीता में प्रत्यक्ष रूप से नहीं है। यह नाथ पंथ का रहस्य है। कुण्डलिनी जागरण के विषय में श्री ज्ञान नाथ कहते हैं—जब कुण्डलिनी जाग उठती है तब बड़े वेग के साथ झटका देकर ऊपर की ओर अपना मुँह फैलाती है, ऐसा मालूम होता है जैसे बहुत दिनों की भूखी हो और अब जागने के साथ ही अधीर हो उठी हो। अपनी जगह से नहीं हटती, पर शरीर में पृथ्वी और जल दो भाग हैं उन सबको चट कर जाती है। उदाहरण के लिये—हथेलियों और पाँव तलों को शोध कर उनका रक्त

मांसादि खाकर ऊपर के भागों को भेदती है और अंग-प्रत्यंग की संधियों को छान डालती है। नखों का सत भी निकाल लेती है। त्वचा को धोकर पोंछ-पाँछकर स्वच्छ करती है और उसे अस्थि पंजर से सटाये रहती है। अस्तु ! पृथ्वी और जल इन दो भूतों को खा चुकने पर वह पूर्णतया तृप्तजन्य समाधान प्राप्त होने पर उसके मुख से जो गरल निकलता है उसी गरल रूप अमृत को पाकर प्राण वायु जीता है।

कुण्डलिनी के सुषुम्ना में प्रवेश करने पर ऊपर की ओर जो चन्द्रामृत का सरोवर है वह धीरे-धीरे उलट जाता है और वह चंद्रामृत कुण्डलिनी के मुख में गिरता है। कुण्डलिनी के द्वारा वह रस सर्वांग में भर जाता है और प्राणवायु जहाँ का तहाँ ही स्थिर हो जाता है। तब उस समय शरीर की कांति कैसी दीखती है, इस विषय में श्री ज्ञानेश्वर कहते हैं—"शरीर पर त्वचा की सूखी पपड़ी-सी रहती है वह भूसी की तरह निकल जाती है। तब उस शरीर की कांति केसर के रंग की सी अथवा रत्न रूप बीज के कोंपल सी दीखती है। अथवा ऐसा मालूम होता है जैसे सायंकाल के आकाश के रंग की लाली निकाल कर उससे वह शरीर बनाया गया हो। अथवा आत्म चैतन्य तेज का ही यह लिंग बना हो। कनक चम्पक की ही जैसी कला हो या अमृत का पुतला हो, या कोमलता की जैसी बहार आई हो। शारदीय पूर्णिमा की आर्द्रता में जैसे चन्द्रबिम्ब की शोभा, या कहिये कि मूर्तिमंत तेज ही आसन पर विराजमान हो। जब कुण्डलिनी चन्द्रामृत पान करती है तब ऐसी देहकांति होती है और तब उस देह से यमराज भी काँपते हैं।" उस साधक की देह का प्रत्येक अंग नया और कांतिमय बनता है। अंग-प्रत्यंग की उस शोभा का वर्णन भी सन्त ज्ञानेश्वर ने किया है।

यहीं उसे लघिमादि सिद्धियाँ प्राप्त होती हैं। उसकी काया कंचन-कांतिवाली हो जाती है। पर वह वायु जैसी हल्की होती है। कारण, उसमें पृथ्वी और जल अंश नहीं होते। तब वह सागर-पार की वस्तु को देखता, स्वर्ग में होने वाले विचारों को सुनता और चींटी के मन को भी जान लेता है। वायुरूप घोड़े पर सवार होता और पैरों के बिना भगाये जल पर चलता है। ऐसी अनेक सिद्धियाँ उसे प्राप्त हो जाती हैं।

दो भूतों को खाकर कुण्डलिनी जब हृदय में आती है, तब अनाहत की भाषा बोलती है। वहाँ घोष के उस कुण्ड में नाद-चित्रों के ओंकार से रूप खिंचे रहते हैं। तब हृदयाकाश के मध्यवर्ती स्थान में रही हुई कुण्डलिनी तीसरे तत्व तेज की छाक अतृप्त चैतन्य को अर्पण करती है (तेज को चट कर जाती है)। उस समय वह कुण्डलिनी ऐसी लगती है जैसी वायु की मूर्ति हो और उसने पहना हुआ पीताम्बर उतार दिया हो। इसका यह परिणाम होता है कि "नाद बिन्दु कला ज्योति" इन सबका कोई नाम निशान नहीं रह जाता। वहाँ न कोई मनोविग्रह है, न प्राण वायु का निरोध है और न ध्यान करने की इच्छा ही है। कुण्डलिनी का तेज जब लय होता है तब देह का कोई आकार नहीं रह जाता, देह वायु रूप बन जाती है और तब उस साधक से संसार की आँखों में छिपते बनता है। देह वही है जो पहले थी पर वही ऐसी बन जाती है जैसे आकाश की बनी हो। ऐसी देह जब बन जाती है तब उसे खेचर कहते है। देहधारी लोगों में ऐसा रूप प्राप्त होना एक बड़ा चमत्कार है। उसे अणिमादि सिद्धियाँ प्राप्त होती हैं।

इस तरह भूतत्रय का लोप होने पर प्राण वायु अकेला रह

जाता है। पर वह शरीराकार ही रहता है। यह प्राण वायु भी वहाँ से निकलकर मूर्ध्नि आकाश में जा मिलता है। तब कुण्डलिनी-कुण्डलिनी नहीं कहाती, उसे 'मारुत' नाम प्राप्त होता है। पर शिव के साथ जब तक ऐक्य नहीं होता तब तक शिवमत्त्व रहता ही है।

पीछे काल पाकर गगन में गगन मिलने की जो अवस्था है उसका अनुभव साधक को प्राप्त होता है। उसका वर्णन नहीं हो सकता। कारण, वाणी इस स्थान से बहुत पीछे रह जाती है। उस अवस्था को 'अनिर्वाच्य महासुख' कहकर ही संतोष कर लेना पड़ता है। यथार्थ में वह स्थान ऐसा है कि वहाँ शब्द न पहुंचकर पीछे लौट आता है, संकल्प समाप्त हो जाता है और विचार की हवा भी वहाँ नहीं लगती कुण्डलिनी के जागने पर जीव स्वयं निज रूप को प्राप्त होकर सुख रूप हो जाता है।

कुण्डलिनी जागरण पर एक और अनुभव स्वामी विवेकानन्द के गुरुदेव श्री रामकृष्ण परमहंस का प्रस्तुत कर रहे हैं। रामकृष्ण जी परमहंस कहते हैं—जीवात्मा और परमात्मा के योग के उद्देश्य से काम और कांचन की आसक्ति त्याग कर पहिले निर्जन स्थान में स्थिर आसन से अनन्य मन होकर ध्यान चिंतन करना चाहिये। केवल पुस्तक में ज्ञान की बातें पढ़ने या सुनने से कुछ होने का नहीं, धारणा चाहिये, तब तो होगा।

माँ को व्याकुल होकर रोते-रोते पुकारना चाहिए, तब तो कुण्डलिनी जागेगी। निर्जन में, अकेले एकाग्रता के साथ, गाना गाने से भी वो जाग उठती है—

'जागो माँ कुण्डलिनी, तुमि ब्रह्मानन्द स्वरूपिणी।

तुमि नित्यानन्द स्वरूपिणी ।
प्रसुप्त भुजगाकारा आधार पद्म वासिनी ।।

त्रिकोणे जले अग्नि तापित होइल तनु ।
मूलाधार त्यज शिव, शम्भु शिर वेष्टिनी ।।

गच्छ सुषुम्नार पथे स्वाधिष्ठाने होउ उदय ।
मणिपूर, अनाहत विशुद्धाज्ञा संचारिणी ।।

शिरसि सहस्र-दले परम शिवेते मिले ।
क्रीड़ा कर कुतूहले सच्चिदानन्द दायिनी ।।

गान से रामप्रसाद सिद्ध हुए थे। व्याकुल होकर गाना गाने से ईश्वर दर्शन होता है। भक्ति योग से कुण्डलिनी शीघ्र जागृत होती है। वे जगकर सुषुम्ना नाड़ी मध्य होकर स्वाधिष्ठान, मणि पूरक आदि चक्र भेदन कर अन्त में शिर मध्य में पहुंचती है। इसी को महावायु की गति कहते हैं। इसके बाद ही समाधि होती है।

साधारण जीव का मन लिंग, गुह्य और नाभि इतनी ही दूर में रहता है—खाना, पहनना, रमण करना आदि। साध्य साधना के बाद कुण्डलिनी के जाग जाने पर मन इन तीनों को छोड़ देता है।

जो आद्याशक्ति है, वे ही सभी की देह में 'कुण्डलिनी' रूप में हैं। बहुत साधना के बाद ये जागती है। वेद मत से चक्रों को भूमि कहते हैं। हृदय चतुर्थ भूमि है, उसी को अनाहत पद्म-द्वादश दल कहा जाता है। विशुद्ध चक्र पंचम भूमि है। इसका स्थान कण्ठ है—सोलह दल पद्म। हृदय छोड़कर यदि किसी का मन कण्ठ में पहुंचे, तो उस समय ईश्वरीय चर्चा छोड़कर दूसरी कोई भी बातें या कहने की इच्छा नहीं होती है जैसे—

विषयादि की बातें। उस समय मुझे ऐसा लगता था कि विषय की बातें कान में जाने से ही माथे में जोरों की चोट होती थी, मानो किसी ने लाठी मारी हो। दूर पंचवटी में भाग जाता था जहाँ वह सब सुनने को नहीं मिलता था। विषयी व्यक्ति को देखकर भय से छिप जाता था। आत्मीय स्वजनों को देखने से भी मन में भान होता था कि ये सब मुझे पकड़कर अन्ध कूप में डालने आये हैं। उन सबको देखकर डर से घबड़ा जाता था, श्वांस बन्द हो जाता था। जब वहाँ से भागकर दूर चला जाता था, तब शांति मिलती थी। कंठ में आने पर भी मन फिर लिंग, गुह्य और नाभि में लौट जाता था, इस हेतु यहाँ आने पर भी सावधान रहना चाहिए।

उसके बाद षष्ठभूमि आज्ञाचक्र-द्विदल पद्म। इसका स्थान भ्रूमध्य में है। कंठ से चलकर यदि किसी का मन भ्रूमध्य में उठे, गिरने का भय जाता रहता है। तब ईश्वर के रूप का दर्शन होता है। यहाँ आर सहस्रार में एक ही आड़ है, जैसे लालटेन की बत्ती की जलती हुई लौ देख रहे हैं और छूने के लिए हाथ के पास ही है, परन्तु सीसे के बीच में होने के कारण छू नहीं सकते। उसी प्रकार, उस समय परमात्मा इतना निकट बोध होता है, जैसे उनसे मिल गये हो, किन्तु तब भी एक नहीं हो सका है। यहाँ से मन यदि नीचे जाता है, बहुत हुआ तो हृदय तक। उसके नीचे नहीं जा सकता है। यहाँ पहुँचने पर जीव-कोटि के व्यक्ति फिर नीचे नहीं जा सकते। कारण, यहाँ इक्कीस दिन तक निरन्तर समाधि में रहने पर यह आड़ टूट जाती है और सहस्रार-सप्तभूमि-हजार दल का पद्म षटचक्र भेदन कर कुण्डलिनी वहाँ मिलित होती है। 'कुण्डलिनी' के वहाँ जाने पर समाधि होती है। कुण्डलिनी शक्ति सहस्रार में

जो शिव है, उनसे मिलित होती है। तब समाधि होती है और ब्रह्म ज्ञान कुछ भी नहीं रहता है। इस अवस्था में साधक देह रक्षा नहीं कर सकता है। मुँह में दूध देने पर भी घूंट लेने की शक्ति नहीं रहती है। इस भाव से इक्कीस दिन रहने पर देह छूट जाता है, मृत्यु होती है।

साधना अवस्था में आत्मा का रमण प्रत्यक्ष देखा था कैसे कुण्डलिनी जागृत हुई और क्रम-क्रम से सभी पद्म फूट उठे और अन्त में समाधि हुई थी। देखा था, ठीक मेरे ही जैसा एक लड़का सुषुम्ना नाड़ी के भीतर जाकर जीभ द्वारा योनि पद्म के साथ रमण करने लगा था। षट कमल मुदित थे। जैसे-जैसे एक-एक कमल प्रस्फुटित होता था और सभी अधोमुख पद्म ऊर्ध्वमुख हो गये थे। इस प्रकार मूलाधार स्वाधिष्ठान, मणि-पूरक, अनाहत, विशुद्ध, आज्ञा और सहस्रार कमल सभी प्रस्फुटित हो उठे थे। उसी दिन से हमारी यह अवस्था है। कुण्डलिनी जागृत होने पर मूलाधार, स्वाधिष्ठान, मणिपूरक इन सब कमलों को पार हृदय मध्य अनाहत में जब आती है, तब मन-लिंग, गुह्य, नाभि से हटकर चैतन्य होता है और तब साधक को ज्योति दर्शन होता है, उस समय वह आश्चर्य चकित हो कहता--"यह क्या" "यह क्या।"

कुण्डलिनी (सिद्धि) जागरण के मार्ग

कुण्डलिनी महाशक्ति का परिचय, स्थान और स्वरूप वर्णन करते हुए कहा गया है कि वह मूलाधार चक्र के अग्नि कुण्ड में निवास करती है। अतः अग्नि स्वरूप है सुप्त सर्पिणी के समान सोई हुई है। स्वयंभू महालिंग से शिवलिंग से लिपटी हुई है। इसी स्थिति की झाँकी शिव प्रतिमाओं से कराई जाती है। योनि क्षेत्र में एक सर्पिणी शिवलिंग से लिपटी हुई प्रदर्शित की जाती है। शिव पूजा में जल कलश .के पेंदे में छिद्र करके उसे तीन टांग की तिपाई पर स्थापित करते हैं और उसमें से एक-एक बूंद जल शिवलिंग पर टपकता रहता है। यह कुण्डलिनी का ही समग्र स्वरूप है। सहस्रार चक्र को अमृत कलश कहा गया है। उससे सोमरस टपकने का उल्लेख है। खेचरी मुद्रा में इसे 'अमृत स्राव' बताया गया है। यह स्राव अधोमुख है। नीचे की दिशा में रिसता टपकता रहता है। कुण्डलिनी मूल तक जाता है।

कुण्डलिनी महाशक्ति को ऊर्ध्वगामी बनाने और अमृत सोम का आस्वादन कराने का लाभ ब्रह्मी एकता के माध्यम से ही सम्भव है। यही कुण्डलिनी जागरण का उद्देश्य है। सुप्त सर्पिणी अग्नि कुण्ड में पड़ी-पड़ी विष उगलती रहती है और उस से जलन ही जलन उत्पन्न होती है। वासना की अग्नि शान्त नहीं हो सकती, वह शरीर और मन की दिव्य सम्पदाओं का

विनाश करती रहती है। इसका समाधान अमृत रस को पान करने—सोम सम्पर्क से ही सम्भव होता है। यह तथ्य जन-साधारण को समझाने के लिए तीन टांग की तिपाही पर कलश स्थापित करके शिवलिंग पर अनवरत जल धारा चढ़ाने की व्यवस्था की जाती है और इस आध्यात्मिक आवश्यकता का परिचय कराया जा सकता है कि जलन का समाधान मानसिक एवं आत्मिक अमृत रस पीने से-बौद्धिक और भावनात्मक उत्कृष्टता का रसास्वादन करने से ही संभव हो सकता है। रुद्राभिषेक में जल कलश के नीचे जो तीन टांग की तिपाही रखी जाती है वह इड़ा, पिंगला और सुषुम्ना का प्रतीक है। इन्हीं आधारों के सहारे कुण्डलिनी जागरण की पुण्य प्रक्रिया सम्पन्न होती है। अग्नि और सोम से मिलने की आवश्यकता और उसके फलस्वरूप उत्पन्न होने वाले देवत्व का ही प्रत्यक्षी-करण रुद्राभिषेक के कर्मकाण्डों में किया जाता है।

यहाँ हमारा विषय कुण्डलिनी जागरण (सिद्धि) के मार्ग का। अस्तु ! जिस प्रकार एक ही स्थान को पहुंचाने वाले अनेक मार्ग हो सकते हैं। गन्तव्य स्थान में पहुंचने पर ये भिन्न भिन्न मार्ग अभिन्न होकर एक हो जाते हैं, यह सही है, पर भिन्न-भिन्न मार्गों में भिन्न-भिन्न यात्रिशालायें, भिन्न-भिन्न दृश्य और भिन्न-भिन्न भोजन हैं। इसी प्रकार मार्ग छोटे-बड़े भी होते हैं अर्थात किसी मार्ग से चलने में समय अधिक और किसी में कम लगता है। मोटर या रेल से यात्रा करने वाले को वह आनन्द और वह दृष्टि सुख नहीं मिल सकता जो पैदल यात्रा करने वाले को मिलता है। इस प्रकार गन्तव्य स्थान के नाते तो सब मार्ग एक ही माने जा सकते हैं, पर भिन्न-भिन्न पर चलने के जो भिन्न-भिन्न सुख और अनुभव हैं उनके विचार

से ये मार्ग भिन्न-भिन्न ही हैं। अस्तु यह बात पाठक जान गये होंगे कि किसी मार्ग को उत्तम मध्यम कहना साध्य की दृष्टि से नहीं बनता। कारण, सब मार्गों का गन्तव्य स्थान एक ही है। उत्तम, मध्यम की बात यात्री की तैयारी, ताकत और तेजी पर निर्भर करती है। परमात्मा प्राप्ति के मार्गों, कुण्डलिनी (सिद्धि) जागरण के मार्गों की भी यही बात है, कुंडलिनी सिद्धि के लिए हठ योग श्रेष्ठ है या राज योग, लय योग श्रेष्ठ है या ध्यान योग श्रेष्ठ है, यह साधक के अधिकार की बात है। साधक क्या चाहता है, यह जाने बिना इसका निरपेक्ष उत्तर नहीं दिया जा सकता।

जगदम्बा कुण्डलिनी की सिद्धि, उसका जागरण, उनकी कृपा प्राप्ति के लिए हठयोग, लय योग, राजयोग और मन्त्र योग आदि अनेक मार्ग शास्त्रों में वर्णित हैं। सभी मार्ग श्रेष्ठ हैं, पर हम तन्त्र शास्त्रों में वर्णित मंत्र योग के प्रकार कुण्डलिनी जागरण की दिशा में अपेक्षाकृत सरल और सुगम कहे जाने वाले मार्ग से सम्बन्धित सामग्री प्रस्तुत करेंगे।
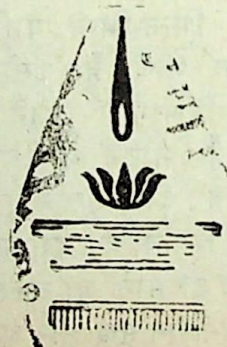
श्री कुण्डलिनी की मंत्रात्मक साधना

हमारा यह पंचभूतात्मक शरीर ही विश्व हैं। शरीर में बहत्तर हजार नाड़ियाँ हैं। उनमें से दस नाड़ियाँ मुख्य हैं और तीन प्रमुख हैं। मेरुदण्ड में चन्द्र स्वरूपा इड़ा बायीं ओर, सूर्य स्वरूपा पिंगला दाहिनी ओर तथा अग्नि तेज स्वरूपा सुषुम्ना तीनों के मध्य में है यह आप जान ही चुके हैं यह शक्तिरूपा सुषुम्ना सभी नाड़ियों में श्रेष्ठ एवं सर्वाधिक महत्वपूर्ण है। यह सर्वतेजोमयी नाड़ी हैं इसके भीतर इच्छा, ज्ञान और क्रियात्मक, समप्रभ स्वयं भू-लिंग हैं। उसके सिर पर रक्त विग्रहा शिखाकारा देव्यात्मिका तथा मदभिन्ना श्री कुण्डलिनी महाशक्ति विराजमान है।

मूलाधार निवासिनी श्रीकुण्डलिनी शक्ति केशमूल व्यापिनी है। यही हृत्पद्मस्था प्राणशक्ति कहलाती है। कण्ठस्था तथा स्वप्ननायिका है। यही तालुस्था होकर सदाधारा कहलाती है। और बिन्दुस्था होकर बिन्दुमालिनी कहलाती है। इच्छा शक्ति, क्रिया शक्ति और ज्ञान शक्ति ये तीनों एकत्र होने पर त्रिशक्तिता कहलाती हैं। इसे शब्दात्मिका और नाद शक्ति भी कहते हैं। अस्तु, हम यहाँ विश्व स्वरूपा जगदम्बा श्री कुण्डलिनी शक्ति की सिद्धि, उनके जागरण, उनकी कृपा प्राप्ति के लिए तंत्र ग्रन्थों में वर्णित मंत्र, स्तोत्र, कवच आदि विधि सहित सरल भाषा में प्रस्तुत कर रहे हैं—

साधक सर्व प्रथम साधना आरम्भ करने हेतु शुभ मुहुर्त का निर्णय करे। इसके बाद उस शुभ मुहुर्त में शुद्ध एवं एकाग्रचित्त होकर कक्ष में सुखद आसन पर बैठ जाये। इस साधना में आपको अधिक सामग्री की आवश्यकता नहीं है पहले कुण्डलिनी प्रतिमा के सन्मुख एक शुद्ध घी का दीपक जलाये तदुपरान्त गुरु स्मरण करे गुरु स्मरण की विधि इस प्रकार है—

आनन्दमानन्दकरं प्रसन्नं ।
ज्ञानस्वरूपं निजबोधरूपम् ।।
योगीन्द्रमीड्यं भवरोग वैद्यं ।
श्री मदगुरुं नित्यमहं नमामि ।।

बोलकर—'ओं श्री गुरुवे नमः' का उच्चारण कर मस्तक झुकाकर गुरु प्रतिमा अथवा मन में गुरु का ध्यान कर प्रणाम करें।

गुरु स्मरण के पश्चात भगवान गणपति का निम्न विधि से गणेश स्मरण करे—

गजाननं भूतगणाधिसेवितं ।
कपित्थजम्बूफल चारु भक्षणम् ।।
उमासुतं शोक विनाश कारकं ।
नमामि विघ्नेश्वर पाद पंकजम् ।।
वक्रतुण्ड महाकाय, सूर्यकोटि समप्रभं ।
निर्विघ्न कुरुमे देव सर्व कार्येषु सर्वदा ।।

यह श्लोक बोलकर भगवान गणेश जी को प्रणाम कर सिद्धि प्रदान करने हेतु प्रार्थना करे।

संकल्प

किसी भी काम को करने से पहले अपने निर्णय को स्पष्ट

त्राटक के अभ्यास से आँखों के रोग समाप्त हो जाते हैं, आँखों की शक्ति बढ़ जाती है, दृष्टि पैनी हो जाती है, एकाग्रता आती है, साधना करने में सहायता मिलती है।

सप्त चक्र
The Seven Chakras
Sahasrara Chakra
सहस्रार चक्र
Ajna Chakra
आज्ञा चक्र
Vishuddha Chakra
विशुद्धि चक्र
Anahata Chakra
अनाहद चक्र
Manipura Chakra
मणिपूर चक्र
Swadhishthana Chakra
स्वाधिष्ठान चक्र
मूलाधार चक्र
Muladhara Chakra
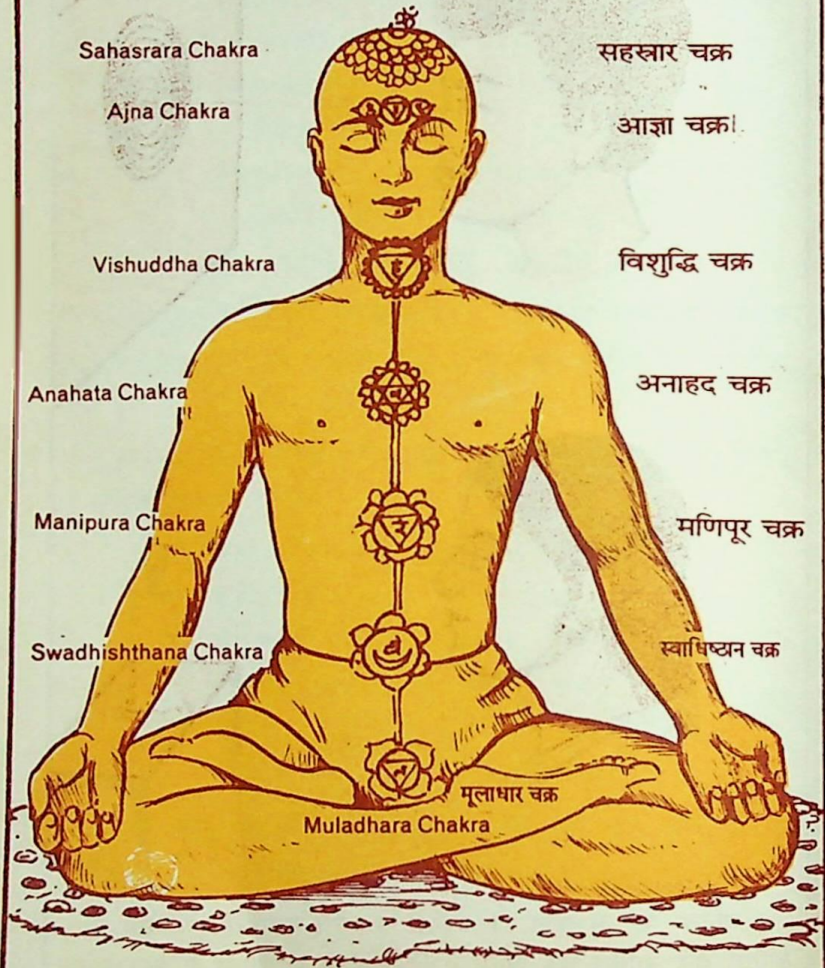
षट्कर्म की क्रियाओं को खाली-पेट करना चाहिए।
नौलि
Nauli
वायु के विकार नष्ट हो जाते हैं।
पेट साफ हो जाता है।
Vastra Dhauti वस्त्रधौति
Neti
नेती
सूत्र नेती
Sutra Neti
जल नेती
Jala Neti
नाक और गले के रोग — खाँसी, जुकाम, सिरदर्द और नेत्र-रोगों.में लाभ होता है।

वस्ति
Basti
गुदा के मार्ग से जल खींचकर, थोड़ी देर अन्दर रखकर, गुदा के मार्ग से बाहर निकाल देने को 'बस्ति-क्रिया' अथवा 'एनिमा' कहते हैं।
कपालभान्ति
Kapalabhati
साँस के रोग में लाभ पहुँचता है
कफ शांत होता है
फेफड़े शुद्ध हो जाते हैं
नासिका मार्ग साफ हो जाता है
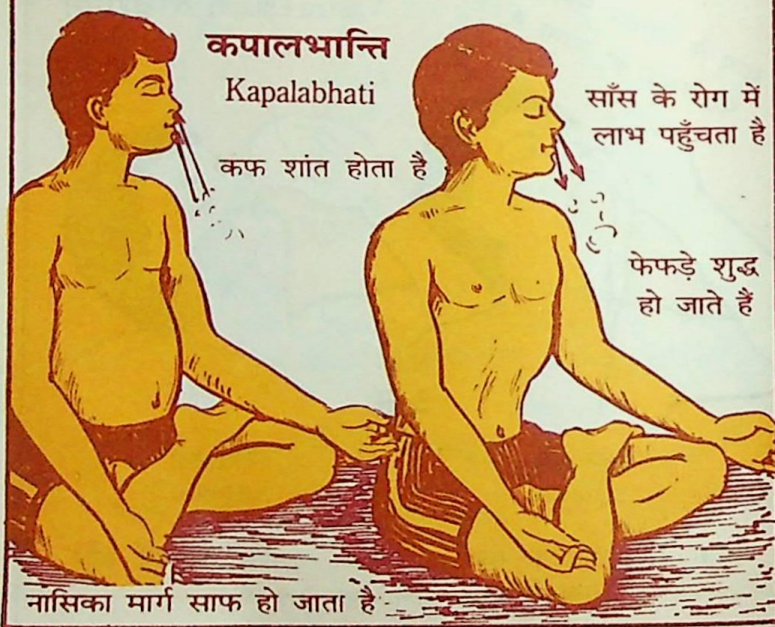
प्राणायाम में प्रयुक्त
श्वास प्रक्रिया का अनुलोम विलोम चक्र

One round of Anuloma Viloma

1 *Breathe in through the left nostril, closing the right with your thumb.*

6 *Breathe out through the left nostril, keeping the right closed with your thumb.*

2 *Hold the breath, closing both nostrils.*

5 *Hold the breath, closing both nostrils.*

अनुलोम विलोम में उपरोक्त
विष्णु मुद्रा प्रयोग की जाती है

3 *Breathe out through the right nostril, keeping the left nostril closed with your ring and little fingers.*

4 *Breathe in through the right nostril, keeping the left nostril closed.*
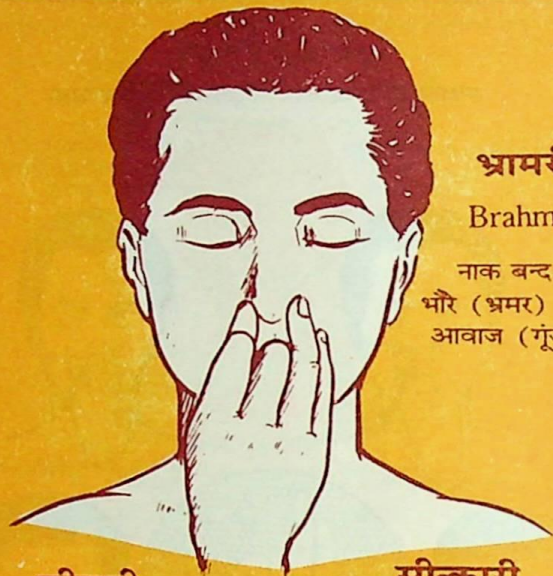
भ्रामरी
Brahmari
नाक बन्द करके
भौंरे (भ्रमर) की तरह
आवाज (गूंज) करें
शीतली
Sithali
सीत्कारी
Sitkari
शीतली प्राणायाम उच्च रक्तचाप के
रोगियों के लिए बहुत महत्त्वपूर्ण है।
कफ-प्रकृति वालों को यह
प्राणायाम नहीं करना चाहिए
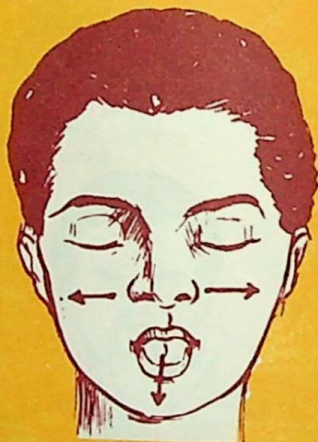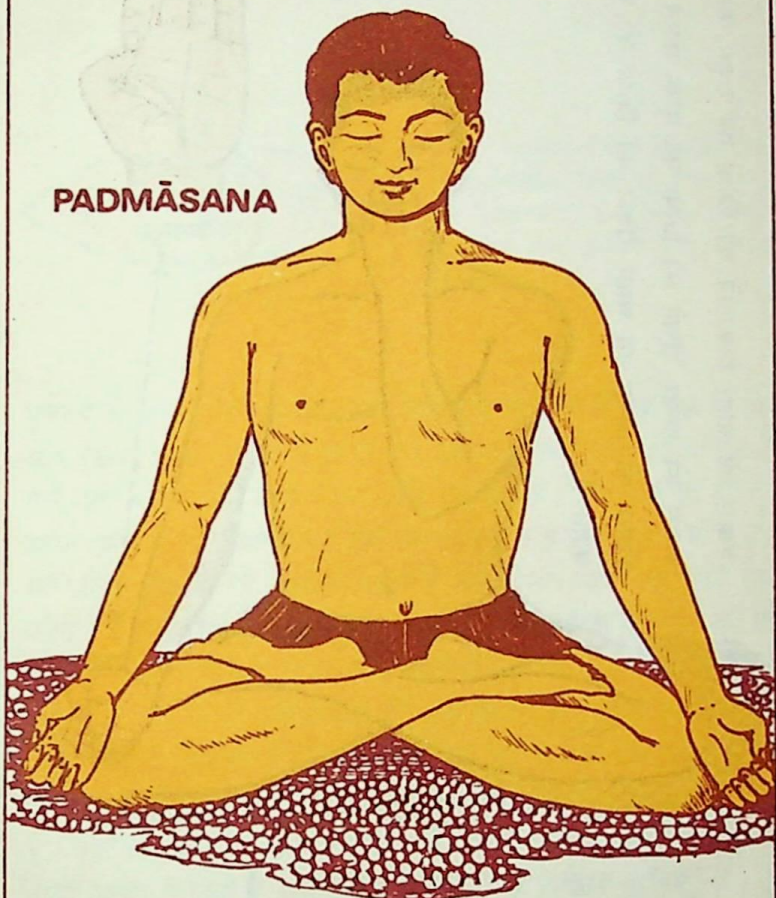
ध्यान लगाने और साधना करने
के लिए सर्वश्रेष्ठ आसन कहलाता है।
प्राणायाम तथा अन्य यौगिक क्रियाएँ करने
के लिए यह आसन मार्ग प्रशस्त करता है।
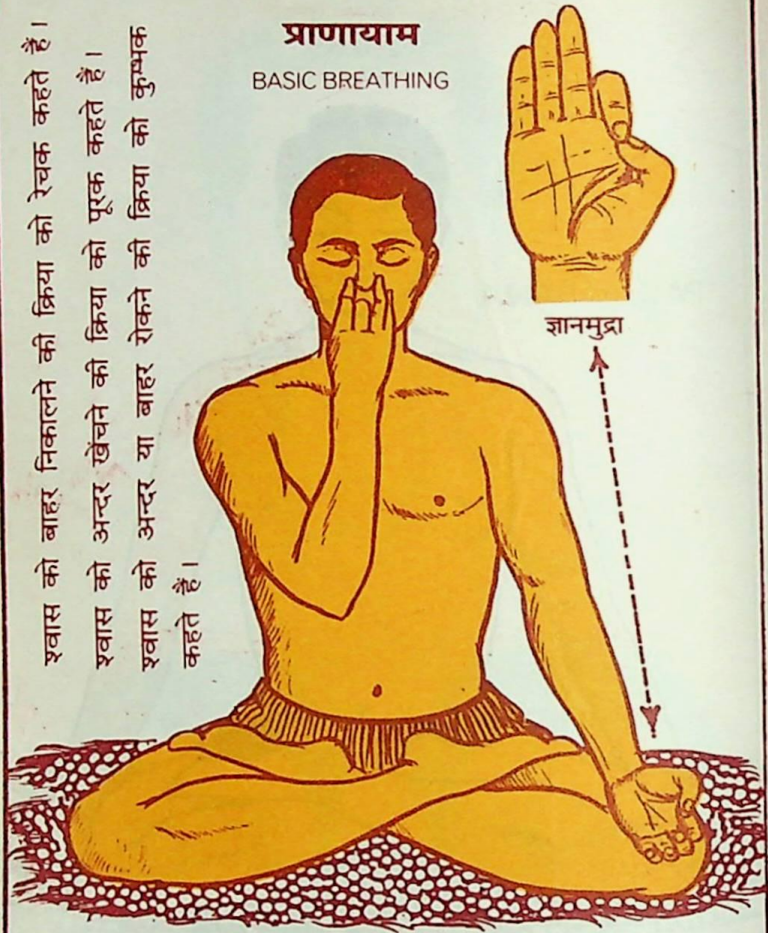
1. बाएँ नथुने से पूरक कीजिए।
2. दाएँ नथुने से रेचक कीजिए।
3. दाएँ नथुने से पुनः पूरक कीजिए।
4. बाएँ नथुने से पुनः रेचक कीजिए।

} यह नाड़ी-शोधन प्राणायाम हुआ।

आज्ञा चक्र

Ajna Chakra
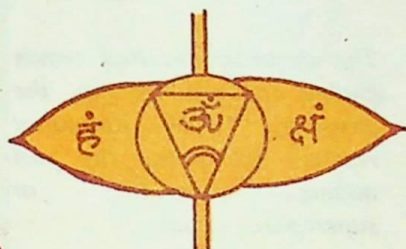
This snow-white chakra has two petals. Seat of the mind, its mantra is Om, shakti Hakini and basic dev Param Atama.

भ्रूमध्य के सामने मेरुदण्ड के ऊपरी भाग सुषुम्ना शीर्ष में यह चक्र स्थित है और इसका कमल दो दलों वाला है। यह चक्र महत् तत्व का द्योतक है। गुण नाद और उसके ऊपर बिन्दु, और रंग श्वेत है। इस चक्र का बीज ऊँ शक्ति हाकिनी और अधिष्ठातृ देव परमात्मा है। इसका तेज सूर्य चन्द्र के सम्मिलित तेज से भी अधिक प्रबल है और इसी स्थान का योगी ध्यान करते हैं। इस स्थान पर परमेष्ठी गुरु, परब्रह्म की आज्ञा योगियों को ज्ञात होती है। इसलिए इसे आज्ञा चक्र कहते हैं। इसके दोनों कमल दलों पर क्रमश: हं और क्षं दो वर्ण अंकित हैं। इस कमल के दाहिनी तरफ गान्धारी और हस्तिनी नाड़ियाँ है जिनका कार्य नेत्रों को प्रकाश देना है। यह चक्र ज्ञानेन्द्रियों का केन्द्र है। इस पर प्रकृति, पुरुष, माया और ब्रह्म का संयोग है। यहाँ पर वाम भाग से इडा, दक्षिण से पिंगला तथा ऊर्ध्व भाग से सुषुम्ना नाड़ी आकर मिलती है, इसीलिये इसे त्रिकुटी या त्रिवेणी भी कहते हैं। इस चक्र की साधना से वृत्तियाँ अन्तर्मुखी होती हैं, मन की चंचलता मिटती है और नेत्रों का प्रकाश बाहर-भीतर के अंगों को देख सकता है। भ्रान्ति नष्ट होकर आत्म तत्त्व में स्थिरता आती है।

सहस्त्रार चक्र

Sahasrara Chakra

The thousand-petalled crown chakra corresponds to the absolute. When Kundalini reaches this point, the yogi attains samadhi or superconsciousness.

यह आज्ञा चक्र के ऊपर एक सहत्र कमलदल वाला चक्र है जिसका स्थान मस्तिष्क है। यह स्थान परम ज्ञान की उत्पत्ति का स्थान है। यहाँ पर समस्त शरीर का संचालन केन्द्र मस्तिष्क है। यहाँ से समस्त प्रकार की आज्ञा प्रसारित होती है। यहाँ कुण्डलिनी, षट्चक्रों के गुण (पृथ्वी, जल, अग्नि, वायु, आकाश और मन) तत्त्वों को क्रमशः वेध अथवा लय करती हुई अपने अन्तिम स्थान सहस्त्रार में पहुंचती है। इसलिये कहा जाता है कि षट्चक्रों के कमलदलों पर से होती हुई कुण्डलिनी के ऊपर जाने व फिर उसी रास्ते से अपने स्थान मूलाधार में वापस आने से कमल के दलों का १०० अंक होता है और इन दस इन्द्रियों के गुणों से गुणा करने से १००० होता है और यही १००० कमलदल है। इसी स्थान पर कुण्डलिनी का पराशिव से अभेदात्मक मिलन होता है और यही स्थान समस्त विश्व के रचयिता परा प्रकृति तथा परा पुरुष या परब्रह्म का स्थान है। इसी स्थान पर योगी अपने आपको जानकर समाधि तथा मोक्ष का अधिकारी होता है। इस स्थान से सदा अमृत का स्राव होता रहता है। जिस समय अमृत स्राव बन्द हो जाता है, उस समय शरीर मृत्यु को प्राप्त हो जाता है।

अनाहत चक्र

Anahata Chakra
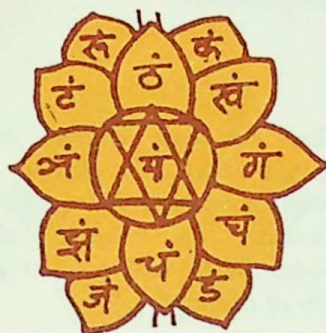
This smoke-coloured chakra has twelve petals. Its element is air, its mantra Yam, shakti Kakini and basic dev Ishwer.

हृदय के सामने मेरुदण्ड के भीतर सुषुम्ना में इस चक्र की स्थिति है और इसका कमल बारह दलों वाला है । यह वायु तत्त्व का द्योतक है । गुण, स्पर्श और रंग धुम्र जैसा है । इस चक्र का बीज यं, शक्ति काकिनी और अधिष्ठातृ देव ईश्वर है । इसमें एक लिंग है जिसे वाण लिंग कहते हैं, इसके ऊपर एक महान् सूक्ष्म छिद्र है जिस पर हत्पुण्डरीक कमल है । इस स्थान पर योगी अपने उपास्य देवता का ध्यान किया करते हैं । इसके प्रत्येक कमल दल पर कं, खं, गं, घं, ङं, चं, जं, झं, ञं, टं, ठं रुं अंकित हैं । यहाँ प्राण वायु का निवास है जो समस्त शरीर का पोषण और रक्षण करती है । इस चक्र की सहायता से निलोभता, प्रेम, सत्यता, सावधानता, समदर्शिता, अहिंसकता, वात्सल्य, विवेकशीलता, जिज्ञासुता, दया, क्षमा और करुणा की शक्ति प्राप्त होती है ।

विशुद्ध चक्र

Vishuddha Chakra

This sea-blue chakra has sixteen petals. Its element is ether, its mantra Ham, shakti Shakini and basic dev Shdashiv. Its known as a gat way of Brahama.

कण्ठ प्रदेश की जड़ में मेरुदण्ड के भीतर सुषुम्ना में यह चक्र स्थित है और इसका कमल सोलह दलों वाला है । यह चक्र आकाश तत्त्व का द्योतक, गुण शब्द अथवा स्वर, रंग, आसमानी है । इस चक्र का बीज हं, शक्ति शाकिनी और अधिष्ठातृ देव सदाशिव हैं । यह चक्र ब्रह्मद्वार कहा जाता है और उदान प्राण का संचालक है । इसके प्रत्येक कमल दल पर अं, आं, इं, ईं, उं, ऊं, ऋं ॠं लृं, लॄं, एं ऐं ओं, औं, अं, अः वर्ण अंकित हैं । इस कमल का अधिष्ठाता जीव है । इस कमल का छेदन होने पर तत्काल मृत्यु हो जाती है । इस चक्र की साधना से सोलह प्रकार के योग साधना की शक्ति आ जाती है ।

स्वाधिष्ठान चक्र

Swadhishthana Chakra
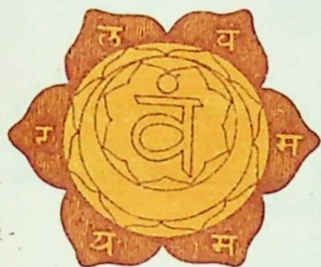
This white chakra has six petals. Its element is water, its mantra vam, shakti Rakini and basic dev Vishnu.

यह चक्र लिंग की जड़ के कुछ ऊपर मेरुदण्ड के भीतर सुषुम्ना में इसकी स्थिति है। इसका कमल छह दलों वाला है। इसके प्रत्येक दल पर वं, भं, मं, यं, रं, लं छह वर्ण अंकित है। यह जल तत्त्व का द्योतक है और रंग जल के समान है। इस चक्र का बीज वं, शक्ति राकिनी और अधिष्ठातृ देव विष्णु हैं। यह चक्र अपान प्राण का संचालक है। इसमें कृकल नाम की नाड़ी और इसी नाम की वायु है। इसका कार्य मूत्र विसर्जन है। यह पुरुषों के वीर्य और स्त्रियों के रज का स्थान है। इस चक्र की साधना से धैर्य, विवेक, बल, क्षमता, विश्वास और दृढ़ता की प्राप्ति होती है। गृहस्थ को इस चक्र की साधना से सुन्दर, बलवान, बुद्धिमान और आध्यात्मिक वृत्ति वाली सन्तान की प्राप्ति होती है।

मणिपूर चक्र

Manipura Chakra

This red chakra has ten petals. Its element is fire, its mantra Ram, shakti Lakini and basic dev Rudra.

नाभि के पीछे मेरुदण्ड के भीतर
सुषुम्ना में इस चक्र की स्थिति है और
इसका कमल दस दलों वाला है। यह अग्नि तेज
तत्त्व का द्योतक है। गुण रूप और रंग अग्नि के समान है।
इस चक्र का बीज रं, शक्ति लाकिनी और अधिष्ठातृ देव रुद्र हैं।
यह चक्र समान प्राण का चालक है। कमल के प्रत्येक दल पर डं, ढं,
णं, तं, थं, दं, धं, नं, पं, फं वर्ण अंकित हैं।
समस्त शरीर को इसी स्थान से पोषण
मिलता है। इस चक्र की साधना से
शान्ति, आनन्द, धृति, समता,
निमोहता, वैराग्य, तन्मयता,
निश्चलता, एकांतप्रियता
और उदासीनता
प्राप्त होती
है।

सप्त चक्र का विराट् दर्शन

The Detailed Seven Chakras
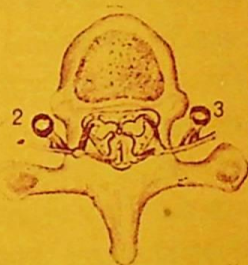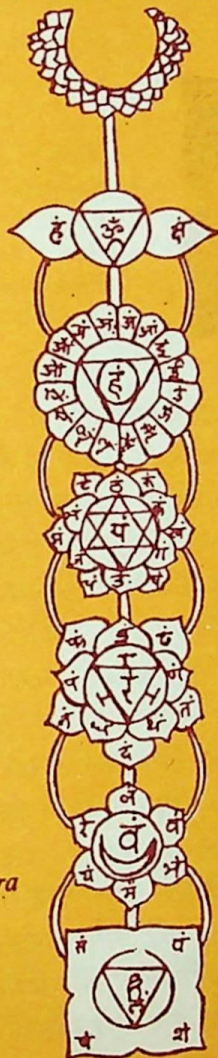
1 Sushumna nadi (spinal cord)
2 Pingala nadi (sympathetic ganglion)
3 Ida nadi (sympathetic ganglion)

1. सुषुम्ना नाड़ी
2. पिंगला नाड़ी
3. इडा नाड़ी

मूलाधार चक्र

Muladhara Chakra

This yellow chakra has fourpetals. Its element is earth, its mantra lam, devta Ganesh, shakti Dakini and basic dev Brahama.

यह चक्र मेरुदण्ड के भीतर उसके सबसे निचले अन्त भाग में गुदा और लिंग के जड़ के नीचे के मध्य सुषुम्ना नाड़ी में है । इस चक्र का स्वरूप अण्डाकार चार दल वाला त्रिकोण है । इसका तत्त्व पृथ्वी और रंग पीला है । इस चक्र का बीज लं, देवता गणेश, शक्ति डाकिनी और अधिष्ठातृ देव ब्रह्मा है । इस त्रिकोण के मध्य में मेरुदण्ड के निचले भाग के अन्त में एक लिंग बन्द कली के समान है जिसमें एक सूक्ष्म छिद्र है जिसे सुषुम्ना नाड़ी का मुख कहते हैं । इसमें साढ़े तीन चक्कर में कसकर लिपटी हुई, अत्यन्त महान तेजस्वी, स्वर्ण प्रदीप्त ज्योतिर्मय स्वरूप, सर्प के सदृश अपनी पूंछ को मुख में लिये हुए जो जीव शक्ति विराजमान है उसे सुप्त कुण्डलिनी कहते हैं ।इसकी पवित्रता, चैतन्यता, ऊर्ध्वमुखता से ही शरीर की शुद्धता जागृति, स्वास्थ्य, बल-बुद्धि की वृद्धि और स्थिरता है । इस चक्र की अशुद्धता से शरीर मलिन हो जाता है । इसके चार कमल दलों में वं, शं, षं, सं चार वर्ण अंकित हैं, जिससे स्वास्थ्य, बल, बुद्धि और स्वच्छता की प्राप्ति होती है । यह चक्र पाचन शक्ति को ठीक रखता है और शरीर की धातु-उपधातुओं और चैतन्य शक्ति को इन गणों का बल प्राप्त होता है ।

करने के लिए देवताओं की साक्षी में समय और स्थान का विशद वर्णन करते हुए, अपने नाम गोत्र का उच्चारण करते हुए, जो प्रतिज्ञा की जाती है, उसे संकल्प कहते हैं। इसका मनोवैज्ञानिक प्रभाव यह होता है कि साधक यह कहकर कि—'मैं' यह कार्य करूंगा' अपने निश्चय को दृढ़ करते हैं।

दाहिने हाथ में जल, अक्षत व पुष्प लेकर संस्कृत या हिन्दी में संकल्प बोलकर जल-अक्षत-पुष्प को जमीन या पात्र में छोड़ दे।

संस्कृत में संकल्प—ओं विष्णुर्विष्णुर्विष्णुः श्री मद्‌भागवतो महापुरुषस्य विष्णोराज्ञया प्रवर्तमानस्य अद्य श्री ब्रह्मणो द्वितीय परार्धे श्री श्वेतवाराह कल्पे, वैवस्वत मन्वन्तरे अष्टाविंशति तमे कलौ कलियुगे प्रथम चरणे, भू लोके भारतवर्षे अस्मिन वर्तमाने·········मासे·········पक्षे·········तिथौ·········वासरे ·········गोत्रोत्पनः नामाहम् समस्तारिष्ट निरसन पूर्वक माधि दैविकाधि भौतिकाध्यात्मिक त्रिविध पाप तापोय शमनार्थं सकल कामना सिद्धयर्थे सर्व विध पीड़ा निवृति पूर्वकं नैरुज्य दीर्घायुः पुष्टि धन धान्य समृद्धयर्थम् श्री कुण्डलिनी प्रसादेन सर्वापन्निवृति सर्वाभीष्ट फलवाप्ति धर्मार्थ काम मोक्ष चतुर्विध पुरुषार्थ सिद्धि द्वारा श्री कुण्डलिनी देवता प्रीत्यर्थे श्री कुण्डलिनी महामंत्र·········संख्याकं जपम् करिष्यते।

उपरोक्त संकल्प में रिक्त स्थान पर क्रमशः मास, शुक्ल या कृष्ण पक्ष, तिथि, वार, साधक का गोत्र, साधक अपना नाम उच्चारण करे।

हिन्दी में संकल्प—ओं श्री विष्णु विष्णु विष्णु।

१. ·········संवत २. ·········मास ३. ·········पक्ष ४.

…तिथि, ५. ………वार को भारत के, ६. ………राज्य के ७. ………नगर/गाँव पर स्थित मैं, ८. ………आयु, ९. ………वर्ष, सुपुत्र श्री १०. ………सुपौत्र श्री, ११. …… जी, १२. ………गोत्र से उत्पन्न, आज १३. ………देवता की प्रसन्नता प्राप्ति पूर्वक शास्त्र में वर्णित फल के प्राप्त करने की कामना पूर्वक सिद्धि के लिये, १४. ……… मंत्र, १५. …… संख्या (या १६. ………समय तक चलने वाले) जप का अनुष्ठान/प्रयोग/साधना शुरू कर रहा हूं।

इस संकल्प में रिक्त स्थान पर क्रमशः १. संवत २. मास ३. शुक्ल या कृष्ण पक्ष ४. तिथि ५. वार ६. राज्य का नाम ७. नगर या गाँव का नाम ८. अपना नाम ९. अपनी आयु १०. अपने पिताश्री का नाम ११. अपने दादा श्री का नाम १२. अपने गोत्र का नाम १३. जिस देवता की साधना करना चाहते हैं उनका नाम १४. देवता के मंत्र का नाम १५. मंत्र की कुल जप संख्या १६. जितने समय तक साधना चलेगी उसका उल्लेख करे। संकल्प जितना स्पष्ट होगा अनुष्ठान द्वारा फल भी उतना ही निश्चित है।

टिप्पणी—संकल्प केवल साधना के प्रथम दिन ही किया जाता है।

संकल्प के पश्चात पूजन करे। देवता की पूजा दो प्रकार से की जाती है। एक तो उपचाखती पूजा तथा दूसरी मानसिक पूजा। अतः हम यहाँ श्री कुण्डलिनी देवी की पंचोपचार मानसिक पूजा सविधि प्रस्तुत कर रहे हैं—

१. ओं लं पृथिवी तत्वात्मकं गन्धं श्री महाकुण्डलिनी।
पादुकाभ्यां नमः अनुकल्पयामि ॥

यह पढ़कर अधोमुख कनिष्ठांगुष्ठ योग से यानि कनिष्ठिका और अंगुष्ठ मिलाकर देवता को गन्ध-मुद्रा दिखाये।

२. ओं हं आकाश तत्वात्मकं,
पुष्पं श्री महाकुंडलिनी,
पादुकाभ्यां नमः अनुकल्पयामि।

यह पढ़कर तर्जन्यंगुष्ठ योग से यानि तर्जनी और अंगूठे का अगला पोर मिलाकर अथवा पाँचों अंगुली व अंगूठे को फल की तरह ऊर्ध्वमुख बनाकर। देवता को पुष्प मुद्रा दिखाये।

३. ओं यं वायु तत्वात्मकं धूपं श्री महाकुण्डलिनी,
पादुकाभ्यां नमः अनुकल्पयामि।

यह पढ़कर ऊर्ध्वमुख मध्यमांगुष्ठ योग से अर्थात मध्यमा और अंगूठे की पहली पोर मिलाकर देवता को धूप-मुद्रा दिखाये।

४. ओं रं अग्नि तत्वात्मकं दीपं श्री महाकुण्डलिनी,
पादुकाभ्यां नमः अनुकल्पयामि।

यह पढ़कर ऊर्ध्वमुख अनामांगुष्ठ योग से यानि अनामिका और अंगुष्ठाग्र भाग मिलाकर देवता अथवा प्रज्वलित दीपक की तरफ संकेत करके दीप मुद्रा दिखाये।

५. ओं वं जल तत्वात्मकं नैवेद्यं श्री महाकुण्डलिनी,
पादुकाभ्यां नमः अनुकल्पयामि।

यह पढ़कर अनामाममध्यमांगुष्ठ से यानि अनामिका और मध्यमा अंगुलियों को मिलाकर देवता उनके द्वितीय पोर पर अंगूठे को रखकर देवता को नैवेद्य-मुद्रा दिखाये।

उपरोक्त विधि मानसोपचार पूजन करने के उपरान्त विनियोग करे।

विनियोग

जैसा शब्द से प्रतीत होता है, उसी के अनुसार आवश्यक बातों का वर्णन करते हुए हम विनियोजन करते हैं। शाबर मंत्रों में संकल्प, विनियोग जैसी व्यवस्थायें नहीं होतीं। कई पौराणिक और तांत्रिक मंत्र भी ऐसे हैं, जिनका विनियोगादि नहीं होता।

दाहिने हाथ की हथेली में जल लेकर निम्न मन्त्र बोलकर जल को कटोरी या भूमि पर डाल दे। वैसे शास्त्रों में जल छोड़ने का कहीं भी विधान नहीं मिलता। विगत कई वर्षों से विनियोग में जल छोड़ने की परिपाटी चली आ रही है। अतः जो उपरोक्त विधि से विनियोग करते हैं तो विनियोग बोलकर जल छोड़े। वैसे विनियोग में ऋषि आदि स्मरण का महत्व बताया गया है, इसलिए इसका पाठ मात्र करना ही ठीक रहता है। जिसको जैसी सुविधा हो वैसे करे। श्री महाकुण्डलिनी देवी के मंत्र का विनियोग इस प्रकार है—

ओं अस्य सर्व सिद्धि श्री कुण्डलिनी,
महामंत्रस्य भगवान श्री महाकालो।

ऋषि विश्वव्यापिनी महाशक्ति,
श्री कुण्डलिनी देवता त्रिष्टुप छंदः।

ह्लींबीजम् सिद्धिशक्ति प्रणवकीलकं,
चतुर्वर्ग प्रीत्यर्थे जपे विनियोगः।

विनियोग के पश्चात ऋष्यादि न्यास करना चाहिए।

न्यास

हमारी देह में विद्यमान कमलों का स्पर्श किया जाता है

और स्पर्श से हमारे हाथ से निकलने वाली विद्युत उन केन्द्रकों को जाग्रत करती है। इसका प्रयोजन शरीर के उन महत्वपूर्ण अंगों में पवित्रता भरना, उनकी देव चेतना को जागृत करना है। साधना काल में उनके जागृत देवत्व से सारे कृत्य पूरे करना तथा इसके अनन्तर भी उन अवयवों को सशक्त एवं संयत बनाए रखना।

न्यास सामान्य रूप से चारों अंगुलियों व अंगूठे को मिलाकर स्पर्श करने से होता है।

ऋष्यादि न्यास

१. ओं भगवान श्री महाकालो ऋषये नमः शिरसि।

इस मन्त्र को बोलकर दाहिने हाथ की अंगुलियों से सिर का स्पर्श करे।

२. ओं त्रिष्टुप छन्दसे नमः मुखे।

यह मन्त्र पढ़ते हुए दाहिने हाथ की अंगुलियों से हृदय का स्पर्श करे।

३. ओं महाशक्ति श्री कुण्डलिनी देवतायै नमः हृदये।

इस मंत्र को पढ़कर हृदय का स्पर्श करे।

४. ओं ह्लीं बीजाय नमः गुह्ये।

इस मंत्र को पढ़कर गुह्यांगिनी के सामने हाथ करे। इस समय यह भावना करे कि गुह्यांग का स्पर्श हो रहा है।

५. ओं सिद्धिः शक्तये नमः पादयो।

दाहिने हाथ की अंगुलियों से दोनों पैरों का स्पर्श करे।

६. ओं प्रणव कीलकाय नमः नाभौ।

यह मन्त्र बोलकर नाभि का स्पर्श करे।

७. ओं विनियोगाय नमः सर्वांगे।

दोनों हाथों से सिर से पैर तक सारे अंगों का स्पर्श करे।

करन्यास

करन्यास की विधि इस प्रकार है—

१. ओं ह्लां ह्लीं ह्लूं ह्लैं ह्लौं ह्लः अंगुष्ठाभ्यां नमः।

इस मन्त्र को पढ़कर दोनों हाथों की तर्जनी अंगुलियों से दोनों अंगूठों का स्पर्श करे।

२. ओं ह्लां ह्लीं ह्लूं ह्लैं ह्लः तर्जनीभ्यां नमः।

इस मन्त्र को पढ़कर दोनों हाथों के अंगूठों से दोनों तर्जनी अंगुलियों का स्पर्श करे।

३. ओं ह्लां ह्लीं ह्लूं ह्लैं ह्लः मध्यमाभ्यां नमः।

इस मन्त्र को बोलकर दोनों हाथों के अंगूठों से दोनों मध्यमाओं का स्पर्श करे।

४. ओं ह्लां ह्लीं ह्लूं ह्लैं ह्लौं ह्लः अनामिकाभ्यां नमः।

इस मन्त्र को बोलकर दोनों हाथों के अंगूठों से दोनों अनामिका अंगुलियों का स्पर्श करे।

५. ओं ह्लां ह्लीं ह्लूं ह्लैं ह्लौं ह्लः कनिष्ठिकाभ्यां नमः।

दोनों हाथों के अंगूठों से दोनों कनिष्ठिका अंगुलियों का स्पर्श मंत्र बोलकर करे।

६. ओं ह्लां ह्लीं ह्लूं ह्लैं ह्लौं ह्लः करतलकर पृष्ठाभ्यां नमः।

यह मंत्र बोलकर दोनों हाथों की हथेलियों एवं उनके पृष्ठ भागों का स्पर्श करे।

षडंग न्यास

इस न्यास को हृदयादि न्यास भी कहते हैं। षडंग न्यास इस प्रकार है—

१. ओं ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रैं ह्रौं ह्रः हृदयाय नमः।

इस मन्त्र को बोलकर दाहिने हाथ की पाँचों अंगुलियों से हृदय का स्पर्श करे।

२. ओं ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रैं ह्रौं ह्रः शिरसे स्वाहा।

यह मन्त्र पढ़ते हुए पाँचों अंगुलियों से शिर का स्पर्श करे।

३. ओं ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रैं ह्रः शिखायै वषट।

यह मन्त्र पढ़कर अंगुलियों से शिखा (चोटी) का स्पर्श करे।

४. ओं ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रैं ह्रौं ह्रः नैत्रत्रयाय वौषट्।

दाहिने हाथ की अंगुलियों के अग्र भाग से दोनों नेत्रों और ललाट के मध्य भाग का स्पर्श करे।

५. ओं ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रैं ह्रौं ह्रः कवचाय हूं।

इस मन्त्र को पढ़कर दाहिने हाथ की अंगुलियों से बायीं भुजा का तथा बायें हाथ की अंगुलियों से दाहिनी भुजा का एक साथ स्पर्श करे।

६. ओं ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रैं ह्रौं ह्रः अस्त्राय फट्।

इस मन्त्र को बोलकर दाहिने हाथ को सिर के ऊपर से बाईं ओर से पीछे की तरफ ले जाकर दाहिनी ओर से ले आये तथा तर्जनी व मध्यमा अंगुलियों से बायें हाथ की हथेली पर ताली बजाये।

न्यास के पश्चात देवता का ध्यान करे।

ध्यान

मंत्र के देवता की आराधना में उसके प्रतीक के रूप के स्वरूप का हृदय स्थल में अथवा भूमध्य में कल्पित किया जाकर स्मरण किया जाता है। श्री कुण्डलिनी देवी के ध्यान मन्त्र इस प्रकार हैं—

१. मूलाधारे स्मरेद्दिव्यं त्रिकोणं तेजसां निधिम्।
शिखा आनीय तस्याग्नेरथ ऊर्ध्व व्यवस्थिता॥
तस्या शिखाया मध्ये परमात्मा व्यवस्थितः।
स ब्रह्मा स शिवः सेन्द्रः सोक्षरः परम स्वराट्॥
स एवं विष्णुः स कालोऽग्निः चन्द्रमा।
इति कुण्डलिनी ध्यात्वा सर्व पापैः प्रमुच्यते॥

मूलाधार में दिव्य त्रिकोण तेज पुंज, ऊर्ध्वगामी तेज शिखा के मध्य, परब्रह्म अवस्थित है। वह तेज ही ब्रह्मा, विष्णु, शिव, इन्द्र, अक्षर, काल, अग्नि, चन्द्रमा, प्राण आदि हैं। इस प्रकार श्री कुण्डलिनी का ध्यान करना चाहिए।

२. ओं प्रसुप्त भुजगाकारां स्वयंभू लिंगमाश्रितां,
विद्युत कोटि प्रभां देवीं विचित्र वसनान्वितां।
शृंगारादि रसोल्लासां सर्वदा कारण प्रियाम्॥

३. मेरुदण्डे वह्निना शब्दात् पदं तेजोमयीति च,
सिद्धिप्राप्ति पदात् सिद्धिः सर्वकाम पदात् पुनः।
सर्वेशा परिपुरेति चक्र स्वामिनीति च,
गुप्त योनिन्यनगा च कुसुमेडनग मेखले।

सर्व मंत्रमयीत्युक्ता सर्वे द्वन्द्व क्षयकारी,
सर्व सौभाग्यदाचेति सर्व विघ्न निवारिणी।
सर्वज्ञानमयीत्युक्तात्वा सर्वव्याधि विनाशिनी,
सर्वानन्दमयी देवी सर्व रक्षा स्वरूपिणी।
महाशक्ते महागुप्ते ततश्चैव महा-महा,
कुल कुण्डलिनी देवी, कन्दे मूले निवासिनी॥

मेरुदण्ड में अग्नि रूप, शब्द पद, तेजस्वी सिद्धि प्रदान करने वाली, काम पद, सर्व व्यापक, चक्र संस्थानों की स्मारिनी, गुप्त योनि, काम शक्ति, अनंग मेखला, समस्त द्वन्द्वों का क्षय करनेवाली आनन्दमयी, संरक्षक, महाशक्ति, रहस्यमयी, महान-तम की कुण्डलिनी देवी जो कन्दमूल निवासिनी है, का ध्यान करता है।

ध्यान के बाद गायत्री महामन्त्र की एक माला (१०८) जप करें। श्री गायत्री महामन्त्र इस प्रकार है—

ओ३म् भूर्भुवः स्वः तत्सवितुर्वरेण्यं भर्गो देवस्य धीमहि धियो यो नः प्रचोदयात्॥

उपरोक्त गायत्री महामन्त्र का १०८ जप करने के उपरान्त निम्नलिखित कुण्डलिनी महामन्त्र का जप शुरू करें—

(१) ओ३म् ऐं ह्लं ह्लां ह्लीं ह्लूं ह्लैं ह्लौं ह्लः जगन्मातः सिद्धिं देहि देहि स्वयंभू लिंगमाश्रितायै विद्युत कोटि प्रभायै महाबुद्धिप्रदायै सहस्त्र दल गामिन्यै स्वाहा।

अथवा

(२) ओ३म् ह्लं ह्लां ह्लीं ह्लूं ह्लैं ह्लः कुण्डलिनी जगन्मातः सिद्धिं देहि देहि स्वाहा।

विधि व फल

श्री कुण्डलिनी देवी के महामन्त्र की दीक्षा सुयोग्य गुरु से लेकर साधना शुरू करे। मन्त्र का कुल जप चौबीस लाख करना है। प्रतिदिन पाँच हजार जप करे। यदि पाँच हजार जप न कर सके तो तीन हजार जप हमेशा करे। साधना रात्रि ९ बजे बाद अथवा प्रातः ४ बजे से रोजाना आरम्भ करे तो उत्तम है। साधना एकान्त स्थान पर करे। स्थान के लिए श्मशान उत्तम माना गया है, क्योंकि वहाँ हमेशा शांति रहती है। संकल्प केवल प्रथम दिन ही किया जाता है, बाद में प्रतिदिन संकल्प के अतिरिक्त सभी क्रियाएँ विधि पूर्वक करके साधना करे। श्री कुण्डलिनी देवी की सिद्धि साधना काल में, साधना पूरी होने पर कभी भी हो सकती है। कुण्डलिनी सिद्धि होने पर साधक को अनेक सिद्धियाँ स्वतः ही प्राप्त हो जाती हैं तथा वह कुण्डलिनी तत्व का, सम्पूर्ण विश्व-ब्रह्माण्ड के तत्वों का ज्ञाता हो जाता है।

श्री कुण्डलिनी साधना से साधक के पाप पुंज नष्ट हो जाते हैं, वह जरा-मृत्यु रहित होकर मूर्तिमान अनंग की तरह परम सुन्दर नील कुञ्चित होकर चिरायु होता है। शक्ति साधना में मन्त्र योग का ही प्राधान्य है, क्योंकि मन्त्र योग द्वारा ही कुण्डलिनी शक्ति का सरलता से जागरण सम्भव है।

क्षमा प्रार्थना एवं जप समर्पण

यह क्षमा याचना है, जिससे हम आराधित देवता से हमारे किये गये कार्यों में त्रुटियों के लिए विनम्र भाव से क्षमा मांगते हैं—

अपराध सहस्त्राणि क्रियन्तेऽर्हनिशम मया।
दासोऽयमिति मां क्षमस्व परमेश्वरि ।१।

आवाहनं न जानामि न जानामि च विसर्जनम् ।
पूजा चैव न जानामि क्षम्यतां परमेश्वरि ।२।

मन्त्रहीनं क्रियाहीनं भक्तिहीनं सुरेश्वरः ।
यत्पूजितं मया देवो परिपूर्णं तदस्तु मे ।३।

अपराध शतम् कृत्वा देवेश्वरि चोच्चरेत ।
यां गति समवाप्नोति न तां ब्रह्मदयः सुराः ।४।

सापराधोऽस्मि शरणं प्राप्तस्त्वां परमेश्वरि ।
इदानीमनुकम्पयोअहं यथेच्छसि तथा कुरु ।५।

अज्ञानाद्विस्मृतेर्भान्त्या यन्न्यूनाधिकं कृतम् ।
तत्सर्व क्षम्यता देवी प्रसीद परमेश्वरि ।६।

कामेश्वरि जगत देवी सच्चिदानन्द विग्रहे ।
ग्रहाणार्चामिमां प्रीत्यां प्रसीद परमेश्वरि ।७।

गुह्याति गुह्य गोप्त्री त्वं ग्रहाणास्मत्कृतं जपं ।
सिद्धिर्भवतु मे देवी त्वत्प्रसादात्सुरेश्वरि ।८।

अर्थ—परमेश्वरी ! मेरे द्वारा रात-दिन सहस्त्रों अपराध होते हैं, अपना दास समझ कर उन अपराधों को आप कृपा-पूर्वक क्षमा करें।१।

परमेश्वरी ! मैं आवाहन नहीं जानता, विसर्जन नहीं जानता, पूजा करने का ढंग भी नहीं जानता। क्षमा करो।२।

देवि सुरेश्वरी ! मैंने जो मन्त्र-हीन, क्रिया-हीन, भक्ति-हीन पूजन किया है, वह सब आपकी कृपा से पूर्ण हो ।३।

सैकड़ों अपराध करके भी जो आपकी शरण में आता है,

उसे वह गति प्राप्त होती है, जो ब्रह्मादि देवताओं के लिए भी सुलभ नहीं है ।४।

परमेश्वरी ! मैं अपराधी हूँ, किन्तु आपकी शरण में आया हूं। इस समय दया का पात्र हूं। आप जैसा चाहो, करो ।५।

देवी ! अज्ञान से, भूल से अथवा बुद्धि भ्रान्त हो जाने के कारण मैंने जो न्यूनता या अधिकता कर दी हो, वह सब क्षमा करो और प्रसन्न होवो ।६।

सच्चिदानन्द स्वरूप परमेश्वरी ! कामेश्वरी ! आप प्रेम-पूर्वक मेरी पूजा स्वीकार करो और मुझ पर प्रसन्न रहो ।७।

देवी सुरेश्वरी ! आप गोपनीय से गोपनीय वस्तु की रक्षा करने वाली हो। मेरे द्वारा निवेदन किये हुए इस जप को ग्रहण करो। आपकी कृपा से मुझे सिद्धि प्राप्त हो ।८।

क्षमा प्रार्थना के पश्चात् श्री कुण्डलिनी देवी की स्तुति, अष्टक, कवच, स्तोत्रादि का पाठ करे। अन्त में पुनः महादेवी का ध्यान कर, देवता को दण्डवत् प्रणाम कर गुरुदेव आदि को दण्डवत प्रणाम कर गुरुदेव आदि को प्रणाम कर आसन से उठ जाये। यदि जप रात्रि में किया है तो सो जाये और प्रातः ब्रह्ममुहुर्त में जप किया है तो अपने नित्यकर्मों में जगदम्बा का स्मरण करते हुए संलग्न हो जाये।

———

श्री कुण्डलिनी स्तुति

ओ३म् नमस्ते देव देवेशि, योगीश प्राण वल्लभे ।
सिद्धिदे वरदे मातः, स्वयंभू लिंग वेष्टिते ॥

ओ३म् प्रसुप्त भुजगाकारे सर्वदा कारण प्रिये ।
काम कलान्विते देवि, ममाभीष्टं कुरुष्व च ॥

ओ३म् असारे घोर संसारे भव रोगात कुलेश्वरि ।
सर्वदा रक्ष मां देवि, जन्म संसार सागरात् ॥

मूलोन्निद्र भुजंगराजसदृशी यान्तीं सुषुम्नान्तर,
भित्त्वाआधार समहमाशु विलसत्सौदामिनी संनिभाम् ।

व्यामाम्भोज गतेन्दु मण्डलगलद् दिव्यामृतौघै पलुतं पतिं,
सम्भाव्य स्वगृहागतां पुनरिमां संचिन्तयेत कुण्डलीम् ।१।

हंसं नित्यमनन्त मद्वयगुणं स्वाधारतो निर्गता,
शक्तिः कुण्डलिनी समस्त जननी हस्ते गृहीत्वा च तम् ।

याता शम्भुनिकेतनं परसुखं तेनानुभूय स्वयं,
यान्ति स्वाश्रयमर्क कोटि रुचिरा ध्येया जगन्मोहिनी ।२।

अव्यक्तं परबिम्बमंचित रुचिं नीत्वा शिवस्यालयं,
शक्ति कुण्डलिनी गुणत्रयवपुर्विद्युल्लता संनिभा ।

आनन्दामृत कन्दगं पुरमिदं चन्द्रार्ककोटि प्रभं,
संवीक्ष्य स्वगृहं गता भगवती ध्येयान वद्या गुणैः ।३।

मध्ये वर्त्म समीरण द्वयमिथस्संध्यट्ट संक्षो भजं,
शब्दस्तोममतीत्य तेजसि तडित्कोटि प्रभाभास्वराम् ।
उद्यन्तीं समुपास्महे नवजपासिन्दूर सान्द्रारुणां,
सान्द्रानन्द सुधामयीं परशिवं प्राप्तां परां देवताम् ।४।

गगनागमनेषु जा लांघिनी सा,
तनुयाद योग फलानि कुण्डली ।
मुदिता कुल काम धेनु रेषा,
भजतां वांछित कल्पवल्लरी ।५।

आधारस्थित शक्तिबिन्दु निलयां नीवारशूकोयमां,
नित्यानन्दमयीं गलत्पर सुधावर्षै प्रबोधप्रदैः ।
सिक्त्वा षट्सरसीरूहाणि विधिवत्कोदण्ड मध्योदितां,
ध्यायेद् भास्वरबन्धु जीव रुचिरां संविन्मयी देवताम् ।६।

हृत्पंकेरूह भानुबिम्ब निलयां विद्युल्लता मन्थरां,
बालार्कारुण तेजसा भगवती निर्भर्त्सयन्ती तमः ।
नादाख्यां परमर्धचन्द्र कुंटिलां संविन्मयीं शाश्वतीं,
यान्तिमक्षर रूपिणीं विमल धीर्ध्यायेद्विणभुं तेजसाम् ।७।

भाले पूर्ण निशापति प्रतिभटां नीहारहारत्विषा,
सिंचन्तीम मृतेन देवममितेना नन्दयन्ती तनुम ।
वर्णानां जननी तदीयवपुषा संव्याप्य विश्वं स्थितां,
ध्यायेत् सम्यगनाकुलेन मनसा सविन्मयीमम्बिकाम् ।८।

मले भाले हृदि च विलसद्वर्णरूपा सावित्री,
पीनोतुंगस्तनभरनम तन्तमध्यदेशा महेशी ।
चक्रे चक्रे गलित सुधया सिक्तगात्री प्रकामं ।
दद्यादाद्या श्रियमविकलां वांङमयी देवतां वः ।९।

आधारवन्ध प्रमुखक्रियाभिः,
समुत्थिता कुण्डलिनी सुधाभिः ।
त्रिधाम वीज शिवमर्चयन्ती,
शिवांगना वः शिवमातनोतु ।१०।

निजभवन निवासा दुच्चरन्ती विलासैः,
पथि-पथि कमलां चारु हांस विधाय ।
तरुण तरणि कान्तिः कुण्डली देवता,
सा शिवसदन सुधाभिर्दीपयेदात्मतेजः ।११।

सिन्दूर पुञ्जनिभमिन्दु कलावतं,
समानन्द पूर्णनयन त्रय शोभिवक्त्रम् ।
आपीनतुंग कुचनम्रमनंगतन्त्रम्,
शम्भोः कलत्रममितां श्रियमातनोतु ।१२।

त्रर्णैर्णवषड्दिशार विकला चक्षु विभक्तेः क्रमा,
दाद्यैः सादिभिरावृतान् क्षहयुतैः षट्चक्र मध्यानिमान ।
डाकिन्यादिभिराश्रितान् परिचितान् ब्रह्मादिभिर्देवते,
भिन्दाना परदेवता त्रिजगतां चित्ते विधतां मुदम् ।१३।

आधाराद् गुणवृत्तशोभिततनुं लिंगत्रयं सत्वरं,
भिन्दन्तीं कमलानि चिन्मयघनानन्द प्रबोधोत्तराम् ।
संक्षुब्ध ध्रुव मण्डलामृतकर प्रस्यन्द मानामृत,
स्तोत्रः कन्दलिता ममन्दतडिदाकारां शिवां भावयेत् ।१४।

मूलाधारे त्रिकोणे तरुण तरणि भाभास्वरे विभ्रमन्तं,
कामं बालार्क कालानल जरठकुरंगांक कोटि प्रभाभम् ।
विद्युन्माला सहस्त्रद्युति रुचिरलसद्बन्धु जीवाभिरामं,
त्रैगुण्याक्रान्त बिन्दुं जगदुदयलयैकान्त हेतुं विचिन्त्य ।१५।

तस्योर्ध्वे विस्फुरन्तीं स्फुट रुचिरतड़ित्पुंज भाभास्वरांगी,
मुद्गच्छन्तीं सुषुम्नामनु सरणि शिखामालातेन्दु बिम्बम् ।
चिन्मात्रां सूक्ष्म रूपां जगदुदयकरीं भावनामात्रगम्यां,
मूलं या सर्वधाम्नां स्फुरति निरूपमा हुंकृतोदंचितोर: ।१६।
नीता सा शनकैरधौमुख सहस्त्राराारूणाब्जोदरे,
श्च्योतत्पूर्ण शशांक बिम्ब मधुन: पीयूसधारास्त्रतिम् ।
रक्तां मन्त्रमयीं निपीय च सुधानिष्यन्द रूपा विशेद्,
भूयोऽप्यात्म निकेतनं पुनरपि प्रोत्थाम पीत्वा विशेत् ।१७।

योअभ्यस्यनु दिनमेवमात्मनो,
अन्तर्बीजाशम् दुरित जराप मृत्यु रोगान् ।
जित्वासौ स्वयमिव मूतिमाननंग,
संजीवेच्चिरमति नील केश जाल: ।१८।

श्री कुन्डलिनी कवचम्

श्रीआनन्दभैरवी उवाच—

अथ वक्ष्ये महादेव ! कुण्डली-कवचं शुभम् ।
परमानन्दं सिद्धं सिद्ध-वृन्द निषेवितम् ।।
यद्‌धृत्वा योगिनः सर्वे धर्माधर्म-प्रदर्शकाः ।
ज्ञानिनो मानिनो धीरा विचरन्ति यथा नराः ।।
सिद्धयोऽप्यणिमाद्याश्च करस्थाः सर्व देवताः ।
एतत् कवच-पाठेन देवेन्द्रो योगि-राड् भवेत् ।।
ऋषयो योगिनः सर्वे जटिलाः कुल-भैरवाः ।
प्रातःकाले त्रिवारं च मध्याह्ने वार युग्मकं ।।
सायाह्ने बारमेकं तु पठेत् कवचमुत्तमम् ।
पाठादेव महा-योगी कुण्डली-दर्शनं लभेत् ।।

विनियोग :—

ॐ अस्य श्रीकुलऽकुण्डली-कवचस्य ब्रह्मा ऋषिः, गायत्री छन्दः, श्रीकुल-कुण्डली देवता, सर्वाभीष्ट-सिद्धयर्थे पाठे विनियोगः ।

ॐ ईश्वरी जगद्धात्री ललिता सुन्दरी परा ।
कुण्डली-कुल-रूपा तु पातु मां कुल चण्डिका ॥
शिरो मे ललिता देवी पातूग्राख्या कपोलकम् ।
ब्रह्म-रन्ध्रेण पुटिता भ्रू-मध्यं पातु मे सदा ॥
नेत्र-त्रयं महाकाली कालाग्नि-भक्षिका शिखां ।
दन्तावलीं विशालाक्षी श्रोष्ठमिष्टान्न-वासिनी ॥
काम-बीजात्मिका विद्या अधरं पातु मे सदा ।
लृ-युगस्था गण्ड-युग्मं माया-बीजा रस-प्रिया ॥
भुवनेशी कर्ण-युग्मं चिबुकं कनकेश्वरी ।
कपिला मे गलं पातु सर्व-बीज-स्वरूपिणी ॥
मातृका-वर्ण-पुटिता कुण्डली कण्ठमेव च ।
हृदयं काल-पुत्री च कङ्काली पातु मे मुखम् ॥
भुज-युग्मं चंड-दुर्गा चण्ड-दोर्दण्ड-खण्डिनी ।
स्कन्ध-युग्मं स्कन्द-माता कपोलं क्रोध-कालिका ॥
अंगुल्यग्रं कुलानन्दा श्रीविद्या नख-मण्डलम् ।
कालिका भुवनेशानी पृष्ठ-देशं सदाऽवतु ॥
पार्श्व-युग्मं महा-वीरा वीरासन-धराऽभया ।
पातु मां कुल-दर्भस्था नाभिमुदरमम्बिका ॥
कटि-देशं पृष्ठ-संस्था महा-महिष-घातिनी ।

लिंग-स्थानं महा-मुद्रा भग-माला मनु-प्रिया ॥
भगीरथ-प्रिया धूम्रा मूलाधारं गणेश्वरी ।
चतुर्दलं काम-विद्या दलाग्रं मे वसुन्धरा ॥
धीर्धरा धारणाख्या च ब्रह्माणी पातु मे मुखम् ।
मेदिनी पातु कमला वाग्देवी पूर्वगं दलं ॥
छेदिनी दक्षिणे पार्श्वे पातु चण्डा महा-तपा ।
चण्ड-घण्टा सदा पातु योगिनी वारुणं दलं ॥
उत्तरस्थं दलं पातु पृथिवीमिन्द्र-लालिता ।
चतुष्कोणं काम-विद्या ब्रह्म विद्याष्ट कोणकं ॥
अष्ट दलं सदा पातु सर्व-वाहन-वाहना ।
चतुर्भुजा सदा पातु डाकिनी कुल चञ्चला ॥
मेढस्था मदनाधारा पातु मे चारु पंकजम् ।
स्वयम्भू लिंगं चार्वंगी कोटराक्षी समासनम् ॥
कदम्बं वनगा पातु कदम्ब वन वासिनी ।
वैष्णवी परमा माया पातु मे वैष्णवं पद्म् ॥
षड्दलं राकिणी पातु रंगिनी काम वासिनी ।
कामेश्वरी काम रूपा कृष्णं मे पीत वाससं ॥
धनुः सा वन दुर्गा मे शंख मे शंखिनी शिवा ।
चक्रं चक्रेश्वरी पातु कमलाक्षी गदां मम ॥

पद्मं मे पद्म गन्धा च पद्म माला मनोहरा ।
बादि लान्ताक्षरं पातु लाकिनी लोक पावनी ॥
षड् दले स्थित देवांश्च पातु कैलाश वासिनी ।
अग्नि वर्णा सदा पातु गलं मे परमेश्वरी ॥
मणिपूरं सदा पातु मणि-माला-विभूषणा ।
दश पत्रं दश वर्णं डादि फान्तं त्रि-विक्रमा ॥
पातु नीला महाकाली भद्रा भीमा सरस्वती ।
अयोध्या वासिनी देवी महा पीठ निवासिनी ॥
वाग्भवाद्या महा विद्या कुण्डली काल रूपिणी ।
दशच्छद शतं पातु रुद्रं रुद्रात्मकं मम ॥
सूक्ष्मा सूक्ष्म तरा पातु सूक्ष्म स्थान निवासिनी ।
राकिनी लोक जननी पातु कूटाक्षरान्विता ॥
तैजसं पातु नियतं रजकी राज पूजिता ।
विजया कुल बीजस्था तवर्ग तिमिरापहा ॥
चन्द्रात्मिका मणि ग्रन्थि भेदिनी पातु सर्वदा ।
भग माला भृगु सुता पातु मां नाभि वासिनी ॥
नन्दिनी पातु सकलं कुण्डली काल कल्पिता ।
हृत् पद्मं पातु कालाख्या धूम्र वर्णा मनोहरा ॥
दल द्वादश वर्णं च भास्करी भाव सिद्धिदा ।

पातु मे परमा विद्या कवर्गं काम चारिणी ॥
चवर्गं चारु रसना व्याघ्रास्या टंक धारिणी ।
टकारं पातु कृष्णाख्या हाकिनी पातु कालिका ॥
ठंकुरांगी ठकारं मे बीज भाषा महोदया ।
ईश्वरं पातु विमला मम हृत पद्म वासिनी ॥
कर्णिकां काल सन्दर्भा योगिनी योग मातरं ।
इन्द्राणी वारुणी पातु कुल माला कुलांतरं ॥
तारिणी शक्ति माता च कण्ठ वाक्यं सदाऽवतु ।
विप्रचित्ता महोग्रोग्रा प्रभा दीप्ता घनामला ॥
वाक् स्तम्भिनी वज्र देहा वैदेही वृष वाहिनी ।
उन्मत्तानन्द चित्ता च कुलेशी सा भगातुरा ॥
मम षोडश पत्राणि पातु मातृ तया स्थिता ।
सुरान् रक्षतु वेदज्ञा सर्व भाषा च कालिका ॥
ईश्वरार्द्धासन गता प्रपायान्मे सदाशिवा ।
शाकम्भरी महामाया शाकिनी पातु सर्वदा ॥
भवानी भव माता च पायाद् भ्रू मध्य पंकजं ।
द्वि दलं व्रत कामाख्या अष्टांग सिद्धि दायिनी ॥
पातु मामखिलानन्दा मनोरूपा जप प्रिया ।
लकारं लक्षणाक्रान्ता सर्व लक्षण लक्षणा ॥
कृष्णाजिन धरा देवी क्षकारं पातु सर्वदा ।
द्वि दलस्थं सर्व देवं सदा पातु वरानना ॥

बहुरूपा विश्वरूपा हाकिनी पातु चण्डिका।
हरा पर शिवं पातु मानसं पातु पञ्चमी ॥

षट् चक्रस्था सदा पातु षट् चक्र कुल वासिनी।
अकारादि क्षकारान्ता बिन्दु सर्व समन्विता ॥

मातृकार्णा सदा पातु कुण्डली ज्ञान कुण्डली।
पूर्ण काली गति प्रेता पूर्ण गिरि तटं शिवा ॥

उड्डीयानेश्वरी देवी सकलं पातु सर्वदा।
कैलास पर्वतं पातु कैलास गिरि वासिनी ॥

डाकिनी राकिणी शक्तिर्लाकिनी काकिनीकला।
शाकिनी हाकिनी देवी षट् चक्रादीन् प्रपातु मे ॥

कैलासाख्यं सदा पातु पञ्चानन दनूद्भवा।
हिरण्या वर्णा रजनी चन्द्र सूर्याग्नि भक्षिणी ॥

सहस्त्र दल पद्मं मे सदा पातु कुलाकुला।
सहस्त्र दल पद्मस्था दैवतं पातु भैरवी ॥

काली तारा षोडशाख्या मातंगी पद्म वासिनी।
शशि कोटि गलद् रूपा पातु मे सकलां तनुम् ॥

रणे घोरे जले दोषे युद्ध वादे श्मशानके।
सर्वत्र गमने ज्ञाने सदा मां पातु शैलजा ॥

पर्वते विविधावासे विनाशे पातु कुण्डली।

पादादि ब्रह्म रन्ध्रान्तं सर्वाकाशं सुरेश्वरी ॥
सदा पातु सर्व विद्या सर्व ज्ञानं सदा मम ।
नव लक्ष महा-विद्या दश-दिक्षु प्रपातु माम् ॥

फल-श्रुति

इत्येतत्-कवचं देव ! कुण्डलिन्याः प्रसिद्धिदं ।
ये पठन्ति ध्यान-योगे योग-मार्ग-व्यवस्थिताः ।
ते यान्ति मोक्ष-पदवीमैहिके नात्र संशयः ।
मूल-पद्मे मनोयोगं कृत्वा हृदासन-स्थितः ॥
मन्त्री ध्यायेत् कुण्डलिनीं सूक्ष्म-पद्म-प्रकाशिनीं ।
धर्मोदयां दयारूढ़ामाकाश-स्थान-वासिनीं ॥
अमृतानन्द-रसिकां विकलां सकलां सितां ।
असितां रक्त-रहितां विरक्तां रक्त विग्रहाम् ॥
रक्त-नेत्रां कुल-क्षिप्तां ज्ञानाकुल-जलोज्ज्वलां ।
विश्वाकारां मनोरूपां मूले ध्यात्वा प्रपूजयेत् ॥
यो योगी कुरुते एव स सिद्धो नात्र संशयः ।
रोगी रोगात् प्रमुच्येत बद्धो मुच्येत बन्धनात् ॥
वस्तु-प्रियमवाप्नोति वस्तु हीनं पठेद्यदि ।
पुत्र-हीनो लभेत् पुत्रं योग-हीनो भवेद् वशी ॥

कवचं धारयेद् यस्तु शिखायां दक्षिणे भुजे ।
वामा वाम करे धृत्वा सर्वाभीष्टमवाप्नुयात् ॥
स्वर्णे रौप्ये तथा ताम्रे स्थापयित्वा प्रपूजयेत् ।
स भूयात् कुण्डली पुत्रो यदि ध्यानं दृढ़ं भवेत् ॥

॥ रुद्र-यामले उत्तर-खण्डे कन्द-वासिनी-कवचं सम्पूर्णं ॥

श्री कुण्डलिनी सहस्रनाम स्तोत्रम्

श्री आनन्द-भैरवी उवाच—

अथ कान्तं ! प्रवक्ष्यामि कुण्डली-चेतनादिकं ।
सहस्र-नाम-सकलं कुण्डलिन्याः प्रियं सुखं ।१
अष्टोत्तरं महा-पुण्यं साक्षात् सिद्धि-प्रदायकं ।
तव प्रेम-वशेनैव कथयामि शृणुष्व तत् ।२
बिना यजन-योगेन बिना ध्यानेन यत्फलं ।
तत्फलं लभते सद्यो विद्यायाः सु-कृपा भवेत् ।३
या विद्या भुवनेशानी त्रैलोक्य-परिपूजिता ।
सा देवी कुण्डली माता त्रैलोक्यं पाति सर्वदा ।४

तस्या नाम-सहस्राणि अष्टोत्तर-शतानि च ।
श्रवणात् पठनान्मन्त्री महा-भक्तो भवेदिह ।५
ऐहिके स भवेन्नाथ ! जीवन्मुक्तो महा-बली ।६

अर्थात् कुण्डलिनी के ११०८ नामों को सुनने या पढ़ने मात्र से बिना पूजन, ध्यानादि के ही परम भक्त लोग त्रिलोक-पूजिता भुवनेश्वरी महा-विद्या की कृपा प्राप्त कर इस संसार में जीवन्मुक्त होकर सुख-पूर्वक रहते हैं। वह देवी कुंडलिनी माता तीनों लोकों की सदा रक्षा करती है।

विनियोग :—

अस्य श्रीमहा-कुण्डली-साष्टोत्तरशत-सहस्रनाम-स्तोत्रस्य ब्रह्मा-ऋषिः, जगती छंदः, भगवती श्रीमहा-कुण्डली देवता, सर्व-योग-समृद्धि-सिद्ध्यर्थे पाठे विनि-योगः ।

ऋष्यादि-न्यास :—

श्रीब्रह्मर्षये नमः शिरसि । जगती-छन्दसे नमः मुखे । भगवती श्रीमहा-कुण्डलिनी-देवतायै नमः हृदि । सर्व-योग-समृद्धि-सिद्ध्यर्थे पाठे विनियोगाय नमः अञ्जलौ ।

अष्टोत्तरशत-नाम-साहस्रं

कुलेश्वरी कुलानन्दा कुलीना कुल-कुण्डली,
श्रीमन्महा-कुण्डली च कुल-कन्या कुल-प्रिया ।
कुल-क्षेत्र-स्थिता कौलो कुलीनार्थ-प्रकाशिनी,
कुलाख्या कुल-मार्गस्था कुल-शास्त्रार्थ-पातिनी ।
कुलज्ञा कुल-योग्या च कुल-पुष्प-प्रकाशिनी,
सुकुलीना कुलाध्यक्षा कुल-चन्दन-लेपिता ।
कुल-गर्भासना कुलला कुलच्छात्रा कुलात्मजा,
कुलीना नाग-ललिता कुण्डली कुल-पण्डिता ।
कुल-द्रव्य-प्रिया कौला कलि-कन्या कुलान्तरा,
कुल-काली कुलामोदा कुलशब्दोत्भवाकुला ।
कुल-रूपा कुलोद्भूता कुल-कुण्डलि-वासिनी,
कुलाभिन्ना कुलोत्पन्ना कुलाचार-विनोदिनी ।
कुल-दृक्ष-समुद्भूता कुल-माला कुल-प्रभा,
कुलज्ञा कुल-मध्यस्था कुल-कङ्कण-शोभिता ।
कुलोत्तरा कौल-पूजा कुलालापा कुल-क्रिया,
कुल-भेदा कुल-प्राणा कुल-देवी कुल-स्तुतिः ।
कौलिका कालिका काल्या कलि-भिन्ना कलाकला,
कलि-कल्मष-हन्त्री च कलि-दोष विनाशिनी ।

कङ्काली केवलानन्दा कालज्ञा काल-धारिणी,
कौतुकी कौमुदी केका काका काक-लयान्तरा ।
कोमलांगी करालास्या कन्द-पूज्या च कोमला,
कैशोरी काक-पुच्छस्था कम्बलासन-वासिनी ।
कैकेयी-पूजिता कोला कोल-पुत्री कपिध्वजा,
कमला कमलाक्षी च कम्बलाश्वतर-प्रिया ।
कलिका-भंग-दोषस्था कालज्ञा काल-कुण्डली,
काव्यदा कविता-वाणी काल-सन्दर्भ-भेदिनी ।
कुमारी करुणाकारा कुरु-सैन्य-विनाशिनी,
कान्ता कुलागता कामा कामिनी काम-नाशिनी ।
कामोद्भवा काम-कन्या केवला काल-घातिनी,
कैलास-शिखरारूढा कैलास-पति-सेविता ।
कैलाश-नाथ-नमिता केयूर-हार-मण्डिता,
कन्दर्पा कठिनानन्दा कुलगा कीच-कृत्यहा ।
कमलास्या कठोरा च कीट-रूपा कटि-स्थिता,
कंदेश्वरी कंद-रूपा कौलिका कंद-वासिनी ।
कटकस्था काम-बीजा कृच्छाकृच्छ-गुणोदया,
कृच्छानन्दा कृच्छ-पूजया कृच्छहा कृच्छ रक्षिका ।
कारणांगी कृच्छ-वर्णा कीलिता कोकिल-स्वरा,

कांची-पीठ-स्थिता कांची काम-रूप-निवासिनी ।
कूटस्था कूट-भक्षा च काल-कूट विनाशिनी,
कामाख्या कमला काम्या कामराज-तनूद्भवा ।
कामरूप-धरा कम्रा कमनीया कवि-प्रिया,
कञ्जानना कञ्ज-हस्ता कञ्च-पत्रायतेक्षणा ।
काकिनी कामरूपस्था कामरूप-प्रकाशिनी,
कोला-विध्वंसिनी कङ्का कलङ्कार्क-कलङ्किनी ।
महाकुल-नदी कर्णा कर्ण-काण्ड-विमोहिनी,
काण्डस्था काण्ड-करुणा कर्मकस्था कुटुम्बिनी ।
कमलाभा कलमा कल्ला करुणा करुणा-मयी,
करुणेशी करा-कर्त्री कर्तृ-हस्ता कलोदया ।
कारुण्य-सागरोद्भूता कारुण्य-सिंधु-वासिनी,
कार्तिकेशी कार्तिकस्था कार्तिक-प्राण-पालिनी ।
करुणा-निधि-पूज्या च करणीया क्रिया कला,
कल्पस्था कल्प-निलया कल्पातीता च कल्पिता ।
कुलपा कुल-विज्ञाना कर्षिणी काल-रात्रिका,
कैवल्यदा कोकरस्था कल-मंजीर-रञ्जिनी ।
कलयन्ती काल-जिह्वा किंकरासन-कारिणी,
कुमुदा कुशलानन्दा कौशल्याकाश-वासिनी ।

कसापहास-हन्त्री च कैवल्य-गुण-सम्भवा,
एकाकिनी अर्क-रूपा कुवला कर्कट-स्थिता ।
कर्कोटका कोष्ठ-रूपा कूट-वह्नि-कर-स्थिता,
कूजन्ती मधुर-ध्वानं कामयन्ती सुलक्षणं ।
केतकी-कुसुमानन्दा केतकी-पुष्प-मण्डिता,
कर्पूर-पूर-रुचिरा कर्पूर-भक्षण-प्रिया ।
कपाल पात्र हस्ता च कपाल चन्द्र धारिणी,
कामधेनु स्वरूपा च कामधेनुः क्रियान्विता ।
कश्यपी काश्यपा कुन्ती केशान्ता केश मोहिनी,
काल कर्त्री कूप कर्त्री कुलपा काम चारिणी ।
कुम्कुमाभा कज्जलस्था कमिता कोप घातिनी,
केलिस्था केलि कलिता कोपना कर्पट स्थिता ।
कलातीता काल विद्या कालात्म पुरुषोद्भवा,
कष्टस्था कष्ट कुष्ठस्या कुष्ठहा कष्टहा कुशा ।
कलिका स्फुट कर्त्री च काम्बोजा कामला कुला,
कुशलाख्या काक कुष्ठा कर्मस्था कूर्म मध्यगा ।
कुण्डलाकार चक्रस्था कुण्ड गोलोद्भवा कफा,
कपित्थाग्र वसाकाशा कपित्थ रोध करिणी ।
काहोड़ी काहड़ा काड़ा कंकला भाष कारिणी,

कनका कनकाभा च कनकाद्रि निवासिनी ।
कार्पास यज्ञ सूत्रस्था कूट ब्रह्मार्थ साधिनी,
कलञ्ज भक्षिणी क्रूरा पुञ्जा कपि स्थिता ।
कपाली साधन रता कनिष्ठाकाश वासिनी,
कुञ्जरेशी कुञ्जरस्था कुञ्जरा कुञ्जरा गतिः ।
कुञ्जस्था कुञ्ज रमणी कुञ्ज मन्दिर वासिनी,
कुपिता कोप शून्या च कोपाकोप विवर्जिता ।
कपिंजलस्था कापिंजा कपिंजल तरूद्भवा,
कुन्ती प्रेम कथाविष्टा कुन्ती मानस पूजिता ।
कुन्तला कुन्त हस्ता च कुल कुन्तल मोहिनी,
कान्तांघ्रि सेविका कान्त शुक्ला कोशलावती ।
केशि हन्त्री ककुत्स्था च ककुत्स्थ वन वासिनी,
कैलास शिखरानन्दा कैलास गिरि पूजिता ।
कीलाल निर्मलाकारा कीलाल मुग्ध कारिणी,
कुतुका कुट्टनी कुट्टा कूटनामोद कारिणी ।
क्रौंकारी क्रौंकरी काशी कुहु शब्दास्था किरातिनी,
कूजन्ती सर्व वचनं कारयन्ती कृताकृतं ।
कृपा निधि स्वरूपा च कृपा सागर वासिनी,
केवलानन्द निरता केवलानन्द कारिणी ।

कृमिला कृमि दोषघ्नी कृपा कपट कुट्टिता,
कृशांगी क्रम भंगस्था किंकरस्था कट स्थिता ।
कान्त रूपा कान्त रता काम रूपस्य सिद्धिदा,
काम रूप पीठ देवी काम रूपाकुजां कुजा ।
काम रूपा काम विद्या काम रूपादि कालिका,
काम रूप कला काम्या काम रूप कुलेश्वरी ।
काम रूप जनानन्दा काम रूप कुशाग्र धीः,
काम रूप कराकाशा काम रूप तरु स्थिता ।
कामात्मजा काम कला काम रूप विहारिणी,
काम शास्त्रार्थ मध्यस्था काम रूप क्रिया कला ।
काम रूप महा काली काम रूप यशो मयी,
काम रूप रमानन्दा काम रूपादि कामिनी ।
कुल मूला काम रूप पद्म मध्य निवासिनी,
कृतांजलि प्रिया कृत्या देवी स्थिता कटा ।
कटका काटका कोटि कटि घण्ट विनोदिनी,
कटि स्थूल तरा काष्ठा कात्यायन सु सिद्धिदा ।
कात्यायनी काचलस्था काम चन्द्रानना कथा,
काश्मीर देश निरता काश्मीरी कृषि कर्मजा ।
कृषि कर्म स्थिता कौर्मा कूर्म पृष्ठ निवासिनी,

काल घण्टा नारद रता कल मञ्जीर मोहिनी ।
कलयन्ती शत्रु वर्गान् क्रोधयन्ती गुणागुणं,
कामयन्ती सर्व कामं काशयन्ती जगत् त्रयं ।
कौल कन्या काल कन्या कौल काल कुलेश्वरी,
कौल मन्दिर संस्था च कुल धर्म विडम्बिनी ।
कुल धर्म रताकारा कुल धर्म विनाशिनी,
कुल धर्म पण्डिता च कुल धर्म समृद्धिदा ।
कौल भोग मोक्षदा च कौल भोगेन्द्र योगिनी,
कौल कर्मा नव कुला श्वेत चम्पक मालिनी ।
कुल पुष्प माल्य कान्ता कुल पुष्प भवोद्भवा,
कौल कोल हरा करा कौल कर्म प्रिया परा ।
काशी स्थिता काश कन्या काशी चक्षु प्रिया क्षुधा,
काष्ठासन प्रिया काका काक पक्षक कालिका ।
कपाल रस भोज्या च कपाल नव मालिनी,
कपालस्था च कापाली कपाल सिद्धि दायिनी ।
कपाला कुल कर्त्री च कपाल शिखर स्थिता,
कथना कृपणा श्री दा कृपी कृपण सेविता ।
कर्म हन्त्री कर्म गता कर्माकर्म विवर्जिता,
कर्म सिद्धि रता कामी कर्म ज्ञान निवासिनी ।

कर्म धर्म सुशीला च कर्म धर्म वशंकरी,
कनकाब्ज सुनिर्माण महासिंहासन स्थिता।
कनक ग्रन्थि माल्याढ्या कनक ग्रन्थि भेदिनी,
कनकोद्भव कन्या च कनकाम्भोज वासिनी।
काल कूटादि कूटस्था किटि शब्दान्तर स्थिता,
कंक पक्षि नाद मुखा कामधेनुद्भवा कला।
कंकणाभा धरा कर्दा कर्दभा कर्दम स्थिता,
कर्दमस्थ जलाच्छन्ना कर्दमस्थ जन प्रिया।
कमठस्था कार्मुकस्था कन्नस्था कंस नाशिनी,
कंस प्रिया कंस हन्त्री कंसाज्ञान करालिनी।
काञ्चनाभा काञ्चनदा कामदा क्रमदा कदा,
कान्त भिन्ना कान्त चिता कमलासन वासिनी।
कमलासन सिद्धिस्था कमलासन देवता,
कुत्सिता कुत्सित रता कुत्सा शाप विवर्जिता।
कुपुत्र रक्षिका कुल्ला कुपुत्र मानसा पहा,
कुज रक्ष करी कौजी कुब्जाख्या कुब्ज विग्रहा।
कुनखी कूप विक्षुस्था कुकरी कुधनी कुदा,
कु-प्रिया कोकिलानन्दा कोकिला काम दायिनी।
कु कामिनी कुबुद्धिस्था कूर्प वाहन मोहिनी,

कुलका कुल लोकस्था कुशासन सिद्धिदा ।
कौशिकी देवता कस्या कन्नाद नाद सुप्रिया,
कु सौष्ठवा कु मित्रस्था कु मित्र शत्रु घातिनी ।
कु ज्ञान निकरा कुस्था कुजिस्था कर्ज दायिनी,
ककर्जा कर्ज कारिणी कर्ज बद्ध विमोहिनी ।
कर्ज शोधन कर्त्री च कालास्त्र धारिणी सदा,
कु गतिः काल सुगतिः कलि बुद्धि विनाशिनी ।
कलि काल फलोत्पन्ना कलि पावन कारिणी,
कलि पाप हरा काली कलि सिद्धि सु सूक्ष्मदा ।
कालिदास वाक्य गता कालिदास सु सिद्धिदा,
कलि-शिक्षा-काल-शिक्षा कन्द-शिक्षा-परायणा ।
कमनीय भाव रता कमनीय सु भक्तिदा,
करकाजन-रूपा च कक्षा वाद कराकरा ।
कञ्चु-वर्णा काक-वर्णा क्रोष्टु रूपा कषामला,
कोष्ट्र नाद रता कीता कातरा कातर प्रिया ।
कातरस्था कातराज्ञा कातरानन्द कारिणी,
काश मर्द तरूद्‌भूता काश मर्द विभक्षिणी ।
कष्ट हानिः कष्ट दात्री कष्ट लोक विरक्तिदा,
काया गता काय सिद्धिः कायानन्द प्रकाशिनी ।

काय गन्ध हरा कुम्भा काय कुम्भा कठोरिणी,
कठोर तरु संस्था च कठोर लोक नाशिनी ।
कुमार्ग स्थापिता कुप्रा कार्पास तरु सम्भवा,
कार्पास वृक्ष सूत्रस्था कु वर्गस्था करोत्तरा ।
कर्णाट कर्ण सम्भूता कार्णाटी कर्ण पूजिता,
कर्णास्त्र रक्षिका कर्णा कर्णहा कर्ण कुण्डला ।
कुन्तलादेश नमिता कुटुम्बा कुम्भ कारिका,
कर्णास रासना कृष्टा कृष्ण हस्ताम्बुजार्जिता ।
कृष्णांगी कृष्ण देहस्था कु देशस्था कु मंगला,
क्रूर कर्म स्थिता कोरा किरात कुल कामिनी ।
काल वारि प्रिया कामा काव्य वाक्य प्रिया क्रुधा,
कंज लता कौमुदी च कुज्योत्सना कलन प्रिया ।
कलना सर्व भूतानां कपित्थ वन वासिनी,
कटु निम्ब स्थिता काख्या क वर्गाख्या क वर्गिका ।
किरातच्छेदिनी कार्या कार्याकार्य विवर्जिता,
कात्यायनादि कल्पस्था कात्यायन सुखोदया ।
कुक्षेत्रस्था कुलाविघ्ना करणादि प्रवेशिनी,
कांकाली किकला काला कीलिता सर्व कामिनी ।
कीलितापेक्षिता कूटा कूट कुम्कुम चर्चिता,

कुम्कुमागन्ध निलया कुटुम्ब भवन स्थिता ।
कुंकृपा कारणानन्दा कविता रस मोहिनी,
काव्य शास्त्रानन्द रता काव्य पूज्या कवीश्वरी ।
कटकादि हस्ति रथ हय दुन्दुभि शब्दिनी,
कितवा क्रूर धूर्तस्था केका शब्द निवासिनी ।
कें केवलाम्बिता केता केतकी पुष्प मोहिनी,
कैं कैवल्य गुणोद्धास्या कैवल्य धन दायिनी ।
करी धनीन्द्र जननी काक्षताक्ष कलंकिनी,
कुडवान्ता कांति शांताकांक्षा पारम हंस्यगा ।
कर्त्री चित्ता कांत वित्ता कृषणा कृषि भोजिनी,
कुम्कुमासक्त हृदया केयूर हार मालिनी ।
कीश्वरी केशवा कुम्भा कैशोर जन पूजिता,
कालिका मध्य निरता कोकिल स्वर गामिनी ।
कुर देह हरा कुम्बा कुडुम्बा कुर भेदिनी,
कुण्डलीश्वर संवादा कुण्डलीश्वर मध्यगा ।
काल सूक्ष्मा काल यज्ञा काल हार करी कहा,
कहलस्था कलहस्था कलहा कलहंकरी ।
कुरंगी श्री कुरंगस्था कोरंगी कुण्डलपहा,
कुल लक्ष्मीः कृषण बुद्धिः कृष्णा ध्यान निवासिनी ।

कुलबा काष्ठव लता कृतार्थ करणी कुसी,
कलनकस्था कःस्वरस्था कलिका दोष भंगजा।
कुसुमाकार कमला कुसुम स्रग् विभूषणा,
किंजल्का कैतवाकाशा कमनीय जालोदया।
ककार कूट सर्वांगी ककाराम्बर मालिनी,
काल भेद करा काटा कर्प वासा ककुत्स्थला।
कुवासा कबरी कर्वा कूसवी कुरु पालिनी,
कुरु पृष्ठा कुरु श्रेष्ठा कुरुणां ज्ञान नाशिनी।
कुतूहल रता कांता कुव्याप्ता कष्ट बन्धना,
कषायण तरुस्था च कषायण रसोद्भवा।
कवि विद्या कुष्ट हन्त्री कुष्ठ शोक विसर्जनी,
काष्ठासन गता कार्याश्रया काश्रय कौलिका।
कालिका कालि संत्रस्ता कौलिकध्यानवासिनी,
क्लृप्तस्था क्लृप्त जननी क्लृप्तच्छन्ना कपिध्वजा।
केशवा केशवानन्दा केश्यादि दानवापहा,
केशवांगज कन्या च केशवांगज मोहिनी।
किशोरार्चन योग्या च किशोर देव देवता,
कांतश्री करणी कुल्या कपटाप्रिय घातिनी।
कुकाम जनिता कौंचा कौंचस्था कौंच वासिनी,

कूपस्था कूप बुद्धिस्था कूप माला मनोरमा।

कुल पुष्पाश्रया कांति क्रमदाक्रमदा क्रमा,
कुविक्रमा कुक्रमस्था कुण्डली कुण्ड देवता।

कौण्डिल्य नगरोद्भूता कौंडिल्य गोत्र पूजिता,
कपिराज स्थिता कापी कपि बुद्धि बलोदया।

कपिध्यान परा मुख्या कुव्यवस्था कुसाक्षिदा,
कुमध्यस्था कुकल्पा च कुल पंक्ति प्रकाशिनी।

कुल भ्रमर देहस्था कुल भ्रमर नादिनी,
कुलासंगा कुलाक्षी च कुल मत्ता कुलानिला।

कलि चिह्ना काल चिह्ना कण्ठ चिह्ना कवीन्द्रजा,
करीन्द्रा कमलेश श्रीः कोटि कन्दर्प दर्पहा।

कोटि तेजो मयी कोट्या कोटीर पद्म मालिनी,
कोटीर मोहिनी कोटिः कोटि कोटि विधूद्भवा।

कोटि सूर्य समानास्या कोटि कालानलोपमा,
कोटीर हार ललिता कोटि पर्वत धारिणी।

कुल-युग्म-धरा-देवी कुच-काम-प्रकाशिनी,
कुचानन्दा कुचाच्छन्ना कुच-काठिन्य-कारिणी।

कुच-युग्म-मोहनस्था कुच-मायातुरा-कुचा,
कुच-यौवन-सम्मोहा कुच-मर्दन-सौख्यदा।

काचस्था काच-देहा च काच-पूर निवासिनी,
काचग्रस्था काच-वर्णा कीचक-प्राण-नाशिनी ।
कमला-लोचन-प्रेमा कोमलाक्षी-मनु-प्रिया,
कमलाक्षी कमलजा कमलास्या करालजा ।
कमलांघ्रि-द्वया काम्या कराख्या कर-मालिनी,
कर-पद्म-धरा कन्दा कन्द-बुद्धि-प्रदायिनी ।
कमलोद्भव-पुत्री च कमला-पुत्र-कामिनी,
किरन्ती किरणाच्छन्ना किरण-प्राण-वासिनी ।
काव्य-प्रदा काव्य-चित्ता काव्य-सार-प्रकाशिनी,
कलाम्बा कल्प-जननी कल्प-भेदासन-स्थिता ।
कालेच्छा काल-सारस्था काल-मारण-घातिनी,
किरण-क्रम-दीपस्था कर्मस्था क्रम-दीपिका ।
काल-लक्ष्मीः काल-चण्डा कुल-चण्डेश्वर-प्रिया,
काकिनी-शक्ति-देहस्था कितवा कित-कारिणी ।
करञ्चा कंचुका कौञ्चा काक-चंचु-पुट-स्थिता,
काकाख्या काक-शब्दस्था कालाग्नि-दहनार्थिका ।
कुचक्ष-निलया कुत्रा कुपुत्रा क्रतु-रक्षिका,
कनक-प्रतिमाकारा कर-बन्धाकृति-स्थिता ।
कृति-रूपा कृति-प्राणा कृति-क्रोध-निवारिणी,

कुक्षि-रक्षा-करा कुक्षा कुक्षि ब्रह्माण्ड-धारिणी ।
कुक्षि-देव-स्थिता कुक्षिः क्रिया-दक्षा क्रियातुरा,
क्रिया-निष्ठा क्रियानन्दा ऋतु-कर्मा क्रिया प्रिया ।
कुशलासव-संसक्ता कुशारि-प्राण-वल्लभा,
कुशारि-वृक्ष-मदिरा काशी-राज-वशोद्यमा ।
काशी-राज-गृहस्था च कर्तृ-भ्रातृ-गृह-स्थिता,
कर्णाभरण भूषाढ्या कण्ठ भूषा च कण्ठिका ।
कण्ठ-स्थान-गता कण्ठा कण्ठ पद्म निवासिनी,
कण्ठ-प्रकाश-कारिणी कण्ठ-माणिक्य-मालिनी ।
कण्ठ पद्म सिद्धि करी कण्ठाकाश निवासिनी,
कण्ठ पद्म साकिनीस्था कण्ठ षोडश पत्रिका ।
कृष्णाजिन धरा विद्या कृष्णाजिन सु-वाससी,
कुतकस्था कुखेलस्था कुण्डवालंकृताकृता ।
कल गीता काल ध्वजा कल भंग परायणा,
काली चन्द्रा कला काव्या कुचस्था कुचल प्रदा ।
कुचौर घातिनी कच्छा कच्छादस्था कजातना,
कञ्जा छद मुखी कञ्जा कञ्ज तुण्डा कजीवनी ।
काम राजीव रवाद्यस्था कियद् हुंकार नादिनी,
कणाद यज्ञ सूत्रस्था कीलालमज्ञ सज्ञका ।

कटि हासा कपाटस्था कटु धूम निवासिनी,
कटि नाद घोर तरा कुट्टला पाटलि प्रिया।
कामचाराब्ज नेत्रा च कामचोद्गार संक्रमा,
काष्ठा पर्वत सन्दाहा कष्टाकष्ट निवारिणी।
कहोड मन्त्र सिद्धस्था काहला डिण्डिम प्रिया,
कुल डिण्डिम वाद्यस्था काम डामर सिद्धिदा।
कुलामर मध्यस्था कुल केका निनादिनी,
कोजागर ढोल नादा कास्य वीर रण स्थिता।
कालादि करणच्छिद्रा करुणा निधि वत्सला,
क्रतु श्री दा कृतार्थ श्रीः काल तारा कुलोत्तरा।
कथा पूज्या कथानन्दा कथना कथन प्रिया,
कार्थ चिंता कार्थ विद्या काम मिथ्यापवादिनी।
कदम्ब पुष्प सङ्काशा कदम्ब पुष्प मालिनी,
कादम्बरी पान तुष्टा काय दम्भा कदोद्यमा।
कंकुले पत्र मध्यस्था कुलाधार धरा प्रिया,
कुल देव शरीरार्धा कुल धामा कला धरा।
काम राग भूषणाढया कामिनीरगुण प्रिया,
कुलीन नाग हस्ता च कुलीन नाग वाहिनी।
काम पूर स्थिता कोपा कपाली वन्दनोद्भवा,

कारागार जना पाल्या कारागार प्रपालिनी।
क्रिया शक्ति काल पंक्तिः कर्ण पंक्तिः कफोदया,
काम फुल्लारविन्दस्था काम रूप फलाफला।
काय फला काय फेणा कान्ता नाड़ी फलीश्वरा,
काम फेरु गता गौरी काय वाणी कुवीरगा।
कबरी मणि बन्धस्था कावेरी तीर्थ संगमा,
काम भीति हरा कांता काम वाकु भ्रमातुरा।
कवि भाव हरा भामा कमनीय भया पहा,
काम गर्भ देव माता काम कल्प लतामरा।
कमठ प्रिय मांसादा कमठा कामठ प्रिया,
किमाकारा किमाधारा कुम्भ कार मन स्थिता।
काम्य यज्ञ स्थिता चण्डा काम यज्ञोपवीतिका,
काम यज्ञ सिद्ध करी काम मैथुन यामिनी।
कामाख्या यम लासस्था काल यामा कु योगिनी,
कुरु याग हतायोग्या कुरु मांस विभक्षिणी।
कुरु रक्त प्रियाकारी किंकर प्रिय कारिणी,
कर्त्रीश्वरी कारणात्मा कवि भक्षा कवि प्रिया।
कवि शत्रु प्रष्ठ लग्ना कैलासोपवन स्थिता,
कलि त्रिधा त्रिसिद्धिस्था कलि त्रिदिन सिद्धिदा।

कलंक रहिता काली कलि कल्मष कामदा,
कुल-पुष्प-रंग-सूत्र-मणि-ग्रन्थि-सुशोभना ।
कम्बोज-वंग-देशस्था कुल-बासुकि-रक्षिका,
कुल-शास्त्र-क्रिया-शांतिः कुल-शांतिः कुलेश्वरी ।
कुशल-प्रतिभा काशी कुल-षट्-चक्र-भेदिनी,
कुल-षट्-पद्म-मध्यस्था कुल-षट्-पद्म-दीपिनी ।
कृष्ण-मार्जार-कोलस्था कृष्ण-मार्जार-षष्ठिका,
कुल-मार्जार-कुपिता कुल-मार्जार षोडशी ।
कालांत-कवलोत्पन्ना कपिलांतक-घातिनी,
कल-हासा कालह-श्री कहलार्था कलामला ।
कक्षप-पक्ष-रक्षा च कुक्षेत्र-पक्ष-संक्षया,
काक्ष-रक्षा-रक्षिणी च महा-मोक्ष प्रतिष्ठिता ।
अर्क-कोटि-शतच्छाया आन्वीक्षि-किंकरार्चिता,
कावेरी-तीर-भूमिस्था आग्नेयार्कास्त्र-धारिणी ।

ड़ं किं श्रीं काम-कमला पातु कैलास-रक्षिणी,
मम श्री ईं बीज-रूपा पातु काली शिर-स्थलम् ।

उरु-स्थलाब्जं सकलं तमोल्का पातु कालिका,
उडू-मूलार्क-रमणी उष्टोग्रा कुल-मातृका ।
कृलापेक्षा कृल-मती कुङ्कारी किं-लिपि-स्थिता,

कुं-दीर्घ-स्वरा क्तृप्ता के-कैलास-करार्चिका।
कैशोरी कैं करी कैं कैं बीजाख्या नेत्र-युग्मकं,
कोमा-मतंग-यजिता कौशल्यादि-कुमारिका।

पातु मे कर्ण-युग्मं तु क्रौं क्रौं जीव-करालिनी,
गण्ड-युग्मं सदा पातु कुण्डली-स्वांक-वासिनी।
अर्क-कोटि-शताभासा अक्षराक्षर-मालिनी,
आशु-तोष-करी हस्ता कुल-देवी निरञ्जना।

पातु मे कुल-पुष्पाढया पृष्ठ-देशं सुकृत-क्षमा,
कुमारी कामना-पूर्णा पार्श्व-देशं सदावतु।
देवी कामाख्यका देवी पातु प्रत्यंगिरा कटिं,
कटिस्थ देवता पातु लिंग मूलं सदा मम।
गुह्य देशं काकिनी मे लिंगाधः कुल सिंहिका,
कुल नागेश्वरी पातु नितम्ब देशमुत्तमं।
कंकाल मालिनी देवी मे पातु चोरु मूलकं,
जंघा युग्मं सदा कीर्तिः चक्रापहारिणी।
पाद युग्मं पाक संस्था पाक शासन रक्षिका,
कुलाल चक्र भ्रमरा पातु पादांगुलीर्मम।
नखाग्राणि दश विधा तथा हस्त द्वयस्य च,
विश रूपा कालनाक्षा सर्वदा परि रक्षतु।

कुलच्छत्राधार रूपा कुल मण्डल गोपिता,
कुल कुण्डलिनी माता कुल पण्डित मण्डिता।
काकानना काक तुण्डी काकायुः प्रखरार्कजा,
काक ज्वरा काक जिह्वा कपि क्रोधासन स्थिता।
कपि ध्वजा कपि क्रोशा कपि वाला कपि स्वरा,
काल कांची विंशतिस्था सदा विंश नखाग्रहं।
पातु देवी काल रूपा कलि काल फलालया,
वाते वा पर्वते वापि शून्यागारे चतुष्पथे।
कुलेन्द्र समयाचारा कुलाचार जन प्रिया,
कुल पर्वता संस्था च कुल कैलास वासिनी।
महा दावानले पातु कुमार्गे कुत्सिताग्रहे,
राज्ञोऽप्रिये राज वश्ये महा शत्रु विनाशने।
कलि काल महालक्ष्मीः क्रिया लक्ष्मीः कुलाम्बरा,
कवीन्द्र कीलिता कीला कीलाल स्वर्गवासिनी।
दश दिक्षु सदा पातु इन्द्रादि दश लोकपा,
नवच्छिन्ने सदा पातु सूर्यादिक नव ग्रहाः।
पातु मां कुल मांसाढ्या कुल पद्म निवासिनी,
कुल द्रव्य प्रिया मध्या षोडशी भुवनेश्वरी।
विद्या वादे विवादे च मत्त-काले महा भये,

दुर्भिक्षादि भये चैव व्याधि संकर पीड़िते।
काली कुल्ला कपाली च कामाख्या काम चारिणी,
सदा मां कुल संसर्गे पातु कौले सु संगता।
सर्वत्र सर्व देशे च कुल रूपा सदावतु,
इत्येतत् कथितं नाथ! मातुः प्रसाद हेतुना।
अष्टोत्तर शतं नाम सहस्त्रं कुण्डली प्रियं
कुल कुण्डलिनी देव्याः सर्व मन्त्र सुसिद्धये।

फल-श्रुति

सर्व देव मनूनां च चैतन्याय सु सिद्धये।
अणिमाद्यष्ट सिद्धयर्थं साधकानां हिताय च॥
ब्राह्मणाय प्रदातव्यं कुल द्रव्य पराय च।
अकुलीनेऽब्राह्मणे च न देयः कुण्डली स्तवः॥
प्रवृत्ते कुण्डली चक्रे सर्वे वर्णा द्विजातयः।
निवृत्ते भैरवी चक्रे सर्वे वर्णा पृथक् पृथक्॥
कुलीनाय प्रदातव्यं साधकाय विशेषतः।
दानादेव हि सिद्धिः स्यान्ममाज्ञा बल हेतुना॥
मम क्रियायां यः तिष्ठेत् स मे पुत्रो न संशयः।
स आयाति मम पदं जीवन्मुक्तः स मानवः॥

आसवेन स मांसानि कुल वह्नौ महा निशि ।
नाम प्रत्येकमुच्चार्य जुहुयात् काय सिद्धये ।।
पञ्चाचार रतो भूत्वा ऊर्ध्व रेता भवेद् यतिः ।
सम्वत्सरान्मम स्थाने आयाति नात्र संशयः ।।
ऐहिके कार्य सिद्धिः स्यात् दैहिके सर्व सिद्धिदः ।
वशी भूत्वा त्रि मार्गस्थाः स्वर्ग भूतल वासिनः ।।
अस्य भृत्याः प्रभवन्ति इन्द्रादि लोक पालकाः ।
स एव योगी परमो यस्यार्थेऽयं सु-निश्चलः ।।
यो लोकः प्रजपत्येवं स शिवो न च मानुषः ।
स समाधि गतो नित्यो ध्यानस्थो योगि वल्लभः ।।
चतुर्व्यूह गतो देवः सहसा नात्र संशयः ।
यः प्रधारयते भक्त्या कण्ठे वा मस्तके भुजे ।।
स भवेत् कालिका पुत्रो विद्या नाथः स्वयं भुवि ।
धनेशः पुत्रवान् योगी यतीशः सर्वगो भवेत् ।।
यदि पठति मनुष्यो मानुषी वा महत्या ।
सकल धन जनेशी पुत्रिणी जीव वत्सा ।।
कुल पतिरिह लोके स्वर्ग मोक्षैक हेतुः ।
स भवति भव नाथो योगिनी वल्लभेशः ।।
पठति य इह नित्यं भक्ति भावेन मर्त्यो ।

हरणमपि करोति प्राण विप्राण योगः ॥
स्तवन पठन पुण्यं कोटि जन्माघ नाशं ।
कथितुमपि न शक्तोऽहं महा मांस भक्षा ॥

———

श्री कुण्डलिनी अष्टक

जन्मोद्धार निरक्षिणीह तरुणी
वेदादि बीजादिमा ।
नित्यं चेतसि भाव्यते भुवि
कदा सद् वाक्य संचारिणी ।
मां सा तु प्रिय दास भाव कपटं
संघातये श्रीधरे ! ॥
धात्रि ! त्वं स्वयमादि देव
वनिता दीनाति दीनं पशुम् ॥१॥
रक्ताभामृत चन्द्रिका लिपि मयी
सर्पाकृतिर्निदिता ।
जाग्रत् कूर्म समाश्रिता
भगवती त्वं मां समालोकय ।

मांसोद्गन्ध कुगन्ध दोष जड़ितं
वेदादि कार्यान्वितं ।
स्वल्पान्यामल चन्द्र कोटि किरणे
नित्यं शरीरं कुरु ।।२।।

सिद्धार्थी निज दोष वित्
स्थल गतिर्व्याजीयते विद्यया ।
कुण्डल्या कुल मार्ग मुक्त
नगरी माया कुमार्गः श्रिया ।।
यद्येवं भजति प्रभात समये
मध्याह्न कालेऽथवा ।
नित्यं यः कुल-कुण्डली-जप
पदाम्भोजं स सिद्धो भवेत् ।।३।।

वाय्वाकाश चतुर्दलेऽति विमले
वाञ्छा फलान्यालके ।
नित्यं सम्प्रति नित्य देह घटिता
सांकेतिता भाविता ।।
विद्या कुण्डल मानिनी स्व जननी
माया क्रिया भाव्यते ।
यैस्तैः सिद्ध कुलोद्भवैः प्रणतिभि

सत् स्तोत्रकैः शम्भुविः ।।४।।

धाता शंकर विमोहिनीति

बलवच्छाया पटोद्गामिनी ।

संसारादि महा सुख प्रहनने !

तत्र स्थिता योगिनी ।।

सर्व ग्रन्थि विभेदिनी स्व भुजगा

सूक्ष्मातिसूक्ष्मा परा ।

ब्रह्म ज्ञान विनोदिनी

कुल कुटीराघातिनी भाव्यते ।।५।।

वन्दे श्रीकुल कुण्डली त्रिवलिभिः

सांगैः स्वयम्भू प्रियां ।

प्रावेष्टयाम्बर चित्त मध्य

चपला बालाबला निष्कला ।।

या देवी परिभाति वेद वदना

सम्भावनी तापिनी ।

इष्टानां शिरसि स्वयम्भु

वनिता सम्भवामि क्रियाम् ।।६।।

वाणी कोटि मृदंग नाद मदना

निश्रेणि कोटि ध्वनिः ।

प्राणेशी प्रियतामसूलक
मनोल्लासैक पूर्णानना ।।
आषाढ़ोद्भव मेघ राजि जनित
ध्वान्तानना स्थायिनी ।
माता सा परिपातु सूक्ष्म पथगे !
मां योगिनां शंकरी ।।७।।
त्वामाश्रित्य नरा व्रजन्ति
सहसा वैकुण्ठ कैलासयोः ।
आनन्दैक विलासिनीं शशि
शतानन्दाननां कारणाम् ।।
मातः श्रीकुल कुण्डली प्रिय कले!
काली कलोद्दीपने ।
तत् स्थानं प्रणमामि भद्र वनिते!
मामुद्धर त्वं पथे ।।८।।

फल-श्रुति

कुण्डली शक्ति मार्गस्थं
स्तोत्राष्टक महाफलम् ।
यः पठेत् प्रातरुत्थाय

स योगी भवति ध्रुवम् ॥

क्षणादेव हि पाठेन
कवि-नाथो भवेदिह ।

पावित्री कुण्डली योगी
ब्राह्मणी नो भवेन्महान् ॥

इति ते कथितं नाथ
कुण्डली-कोमलं स्तवम् ।

एतत् स्तोत्र प्रसादेन
देवेषु गुरु गीष्पतिः ॥

सर्वे देवा सिद्धि युताः
अस्या स्तोत्र प्रसादतः ।

द्वि परार्द्ध चिरञ्जीवी
ब्रह्मा सर्व सुरेश्वरः ॥

त्वष्टामपि मम निकटे
स्थितो भगवती पतिः ।

मां विद्धि परमां शक्ति
स्थूल सूक्ष्म स्वरूपिणीम् ॥

सर्व प्रकाश करणीं
विन्ध्य पर्वत वासिनीम् ।

हिमालय सुतां सिद्धां
सिद्ध मन्त्र स्वरूपिणीम् ॥

सर्व भूता महा बुद्धि
दायिनीं दानवा पहाम् ।

स्थित्युत्पत्ति लय करीं
करुणा सागर स्थिताम् ॥

ज्ञानदां वृद्धिदां ज्ञान रत्न
माला कला पदाम् ।

सर्व तेजः स्वरूपाभामनन्त
कोटि विग्रहाम् ॥

दरिद्र धनदां लक्ष्मीं
नारायण मनोरमाम् ।

सदा भावय शम्भो !
त्वं योग नायक पण्डित ॥

कुल मार्ग स्थितो मन्त्री
सिद्धिमाप्नोति निश्चितम् ।

वीर भाव प्रसादेन
दिव्य भावामाप्नुयात् ॥

दिव्यं भावं वीर भावं

ये गृह्णन्ति नरोत्तमाः ।
वाञ्छा कल्पद्रुम लता
पतयस्ते न संशयः ।।
भाव ग्रहण मात्रेण
मम ज्ञानी भवेन्नरः ।
अवश्यं सिद्धिमाप्नोति
सत्यं सत्यं न संशयः ।।८

कुण्डलिनी जागृत

ब्यावर निवासी श्री सिद्धनाथ जी तीर्थ ने कुण्डलिनी जागरण पर 'आत्मानुभव प्रकाश' में अपने अनुभव इस प्रकार लिखे हैं।

मैं अपने गुप्त साधन के अनुभव की बात कहता हूं। यदि तुम भी साधन अभ्यास करोगे तो तुम्हारी कुण्डलिनी अवश्य जागृत होगी व तुम्हें अपने स्वयं दिव्य प्रकाश का अनुभव होगा यह गुरु कृपा है।

सीधे पैर को खूब दबाकर योनि तथा गुदा की सीवन के बीच में ऐड़ी रखो फिर योनि स्थान के ऊपर दूसरे पैर की ऐड़ी रखो, फिर काया शिर तथा ग्रीवा को सम करके शरीर को तोल दो। बाह्य इन्द्रियों को बन्द करके ठूठ के समान निश्चल हो जाओ, स्थिर दृष्टि से अर्धनेत्र खुले निश्चल रहो—यह शांभवी मुद्रा सिद्धासन है।

अन्तरमुख मन से हृदय में—'शिव सिद्ध शरणं' सात बार बोलो और मन ही से सुनो। फिर पुनः मन से हृदय में 'ओं ऐं ह्लीं श्रीं क्लीं स्वाहा' सात बार बोलो और मन से सुनो। फिर वृत्ति को हृदय में स्फुरण से एक कर सोऽहम का चिन्तन करो और फिर निश्चल संकल्प विकल्प से रहित स्थिर अर्ध नेत्र खुले शांभवी मुद्रा में बैठे रहो।

इस प्रकार के सतत चिन्तन अभ्यास से मूलाधार से ब्रह्म

रन्ध्र तक सातों चक्र रूपी कपाट स्वत: ही खुल जाते हैं। जिससे प्रथम अपने आप में परिजातक गहरी सुगन्ध प्रकट होती है फिर स्वयं का दिव्य प्रकाश पुंज अपने अन्दर प्रकट होकर सम्पूर्ण देह में व्याप्त हो जाता है और फिर अन्दर-बाहर एक सा दिव्य प्रकाश ही प्रकाश अनुभूत होता है। यह जीव ब्रह्मलोक रूपी शिव-शक्ति समायोग नामक मोक्ष है। इसके प्रभाव से जीवन-मुक्ति रूप स्वाभाविक अवस्था स्वत: ही प्राप्त होती है।

साधना में ध्यान रखने योग्य बातें

श्री कुण्डलिनी जागरण सिद्धि मंत्र साधना अथवा अन्य किसी भी तंत्र-मंत्र-यंत्र आदि की साधना में सफलता के लिए निम्न बातों, नियमों का पालन करना आवश्यक है। अत: उनकी जानकारी यहाँ प्रस्तुत करते हैं—

▭ शरीर की शुद्धि आवश्यक है। बाह्य शुद्धि स्नान द्वारा ही मानी जाती है। अत: स्नान करके ही साधना में बैठना चाहिए। अधिक सर्दी हो, ऐसा रोग हो जिसमें स्नान न किया जा सके या कोई विवशता हो तो हाथ मुँह धोकर या गीले कपड़े से शरीर पोंछना ही पर्याप्त समझना चाहिए।

▭ शरीर पर कम से कम वस्त्र रखने चाहिये। सर्दी के मौसम में कम्बल का प्रयोग किया जा सकता है।

▭ साधना का स्थान सात्विक व शांत होना चाहिए। वैसे तो नदी का तट, मन्दिर, उद्यान आदि उपयुक्त रहते हैं। परन्तु ऐसी सुविधा न हो सके तो अपने घर में ही एकांत स्थान चुन लेना चाहिए। जहाँ परिवार के अन्य सदस्यों का अधिक आना जाना न हो।

= दिन भर पहने हुए वस्त्रों को पहनकर ही साधना नहीं करनी चाहिए।

= साधना के लिए ऐसे आसन पर बैठना चाहिए जिस पर अधिक देर तक बैठने में कष्ट न हो। पालथी मारकर सीधे ढंग से बैठना उपयुक्त रहता है।

= मेरुदण्ड सदा सीधा हो ताकि सुषुम्ना में प्राण वायु का प्रवाह सुविधा पूर्वक हो सके।

= कुश के आसन पर बैठकर साधना करनी चाहिये। यह प्रयोग सात्विक उपासना में चलता है। रजोगुणी उपासना में सूत का आसन और तमोगुणी उपासना में ऊन के आसन का विधान है। श्री कुण्डलिनी देवी की उपासना में सिंह चर्मासन सिद्धि दायक है। बिना आसन बिछाये नग्न भूमि पर नहीं बैठना चाहिये।

= साधारणतया तुलसी की माला का प्रयोग होता है। सकाम साधना में चन्दन माला प्रयुक्त होती है। श्री कुण्डलिनी देवी की साधना में रुद्राक्ष की माला सर्व सिद्धिदाता है।

= साधना नियमित और निश्चित समय पर ही होनी चाहिये।

= दिशा का विचार आवश्यक है। प्रातःकाल पूर्व की ओर तथा सायंकाल पश्चिम की तरफ मुख करके बैठना चाहिए कुण्डलिनी साधना पूर्व दिशा की ओर मुंह करके ही करनी चाहिए।

= जप इस तरह करना चाहिए कि कण्ठ से ध्वनि तो होती रहे और होंठ भी हिलते रहें परन्तु पास में बैठा व्यक्ति उसे सुन न सके।

▭ एक माला पूरी होने पर सुमेरू का उल्लंघन नहीं किया जाता बल्कि उसे मस्तक तथा नेत्रों से स्पर्श कराकर पीछे की तरफ उल्टा कर पुनः अगली माला का जप आरम्भ कर दिया जाता है।

▭ मंत्र साधना में और लोगों को प्रेरित करना परमार्थ का कार्य है पर अपनी साधना और अनुभवों से दूसरों को परिचित कराना न आवश्यक है और न ही अभीष्ट।

▭ जैसा अन्न होता है वैसा ही मन बनता है। इसलिये तामसिक और राजसिक आहार से यथा सम्भव बचना चाहिए और सात्विक आहार करना चाहिए।

▭ व्यवहार जितना सात्विक हो, उत्तम है। झूठ, छल, कपट, निन्दा, बेईमानी, भ्रष्टाचार आदि से बचना चाहिए।

▭ कामोत्तेजक चलचित्रों, पुस्तकों और उपन्यासों से बचना चाहिए। धार्मिक व अन्य प्रेरक साहित्य का अध्ययन करना ही साधकों के लिए लाभप्रद है। इस अध्ययन में विशेष सावधानी बरतनी चाहिए। अध्ययन के साथ मनन चिन्तन भी होना चाहिए।

▭ सफर या रोग की स्थिति में जब विधि-विधान से जप करना सम्भव न हो तो मानसिक जप चलते-फिरते अथवा लेटे हुए भी किया जा सकता है।

▭ इष्टदेव (श्री कुण्डलिनी देवी) के प्रति अटूट विश्वास और श्रद्धा होना अनिवार्य है, यही साधना की नींव है।

—:o:—

आत्म निवेदन

आजकल तंत्र मंत्र और कुण्डलिनी जागरण का विषय प्राच्यविद्या जगत् में काफी चर्चित है। जहाँ यह विषय साधक को आध्यातम प्राच्यविद्या जगत की ओर ले जाता है और उसे अनेक सिद्धियों का स्वामी भी बनाता है दूसरी ओर कुछ लोगों ने इन विषयों का दुरुपयोग किया है। वे विभिन्न प्रकार के हथकण्डे अपना कर इस विद्या को अपमानित कर रहे हैं तथा इनके नाम पर धन कमा रहे हैं। इसके लिए कोई तथा-कथित विद्वान साधक कैम्प शिविरों का आयोजन करते हैं, जिसमें वे सैकड़ों पर एक साथ शक्तिपात करके कुण्डलिनी जगाने का दावा करते हैं। यह देखकर ऐसा लगता है जैसे शक्तिपात न हुआ कोई सामूहिक मुण्डन कराना हो गया। इसी प्रकार कोई पत्र द्वारा ही कुण्डलिनी जगा देने की बात करते हैं। कहीं स्पर्श मात्र से और कहीं फोटो से कुण्डलिनी जागरण की बात करते हैं।

साधकों ! आपको इस प्रकार के धूर्त पाखण्डी लोगों से सावधान रहना चाहिए। क्योंकि मैं स्वयं भी एक बार धोखा खा चुका हूं। ऐसे लोग जहाँ साधक वर्ग एवं जिज्ञासुओं को गुमराह कर रहे हैं, वहीं हमारे भारतवर्ष की महान् प्राच्यविद्या को भी बदनाम कर रहे हैं। ये लोग कुण्डलिनी जागरण करने की बात तो दूर कुण्डलिनी के तत्व को जानते तक नहीं।

अस्तु ! परिश्रमी साधकों को अपनी साधना पर विश्वास करना चाहिए। ऐसे धोखेबाज लोगों के चक्कर में पड़कर व्यर्थ ही समय, श्रम और धन की हानि नहीं करनी चाहिये।

हमने इस पुस्तक में साधकों के लाभार्थ श्री कुंडलिनी सिद्धि हेतु हठ राजयोग के जटिल एवं क्लिष्ट मार्ग को प्रस्तुत नहीं करके श्री कुण्डलिनी देवी की गोपनीय मंत्रात्मक साधना का सरल मार्ग प्रस्तुत किया है। साधकों को इसी मंत्र योग मार्ग का अनुसरण करके श्री कुण्डलिनी जागरण सिद्धि साधना की ओर सुयोग्य गुरु के निर्देशन में कदम बढ़ाना चाहिए।

श्री कुण्डलिनी शक्ति की साधना योग्य गुरु के निर्देशन में करनी चाहिए। क्योंकि कुण्डलिनी जागरण सिद्धि साधना कोई बच्चों का खेल नहीं है, जिसे पुस्तक में पढ़ लिया और करने बैठ गये। कुण्डलिनी जागरण सिद्धि साधना हेतु इस विषय का गम्भीर अध्ययन, विधि-निषेधों का पालन तथा गुरु निर्देश परमावश्यक है। इनके अभाव में अधिकांश साधनायें सफल नहीं होतीं। और त्रुटि पूर्ण साधना लाभ के स्थान पर हानि भी पहुँचा सकती हैं। साधक भले ही पुस्तकों के माध्यम से पर्याप्त जानकारी प्राप्त कर ले, पर 'गुरु' की वाणी, प्रत्यक्ष निर्देश, व्यावहारिक परामर्श और दर्शन सामिप्य का ऐसा प्रभाव होता है, जो संसार के समस्त ग्रन्थों को एकत्र करने पर भी प्राप्त नहीं हो सकता। यही कारण है कि साधना के क्षेत्र में गुरु को ईश्वर तुल्य कहा गया है।

साधकों को यह बात सदैव स्मरण रखनी चाहिए कि श्री कुण्डलिनी साधना को साधारण खेल या परीक्षा की वस्तु न समझना चाहिए और न इसके जागरण के विषय में वर्णित

सिद्धियों के फेर में पड़ना न चाहिए। जो भी साधना की जाए वह निष्काम होनी चाहिए। ऐसा करने से विघ्नों की और भय की सम्भावना कम रहती है।

कुण्डलिनी जागरण पर अनेक पुस्तकें प्रकाशित हुई हैं, पर कुण्डलिनी की मंत्रात्मक साधना पर पुस्तक का अभाव महसूस हो रहा था। इधर काफी समय से मेरे पास निरन्तर इस विषय पर काफी पत्र आ रहे हैं। अस्तु ! पाठकों की जिज्ञासा को शांत करने एवं परिश्रमी साधकों के लाभार्थ मुझे यह पुस्तक लिखने पर विवश होना पड़ा।

मेरा एक विनम्र निवेदन है कि गुरु बनने की योग्यता मुझमें नहीं है। मैं सिद्ध नहीं हूं, चमत्कार नाम की चीज मेरे पास नहीं है। पुस्तक के विषय में आप समस्या, जिज्ञासा का समाधान चाहें तो पत्र लिख सकते हैं, अवश्य उत्तर दूंगा।

मुझे बचपन से ही सिद्ध महात्माओं के दर्शनों एवं उनके सामिप्य का सुअवसर मिलता रहा है। इस दृष्टि से मैं आरम्भ से ही सौभाग्यशाली रहा हूं। उन सन्त महात्माओं ने मेरे सन्मुख तंत्रादि प्राच्यविद्या के अनेक गुप्त रहस्य उद्‌घाटित किये। ऐसे ही एक घुमक्कड़ सिद्ध पुरुष ने मुझे तीर्थराज पुष्कर में कुछ वर्षों पूर्व मेरे काफी अनुरोध पर स्वानुभूत गोपनीय श्री कुण्डलिनी देवी की मंत्रात्मक साधना सविधि बताने की कृपा की उन महात्मा का नाम श्री भरपूर नाथजी था। उन्होंने मुझे अनेक विचित्र चमत्कार दिखाये, जिन्हें मैंने केवल सुना और पढ़ा था। श्री भरपूर नाथ जी महाराज ने मुझे यह मन्त्र साधना किसी को बताने या कहीं छपाने के लिए मना किया था। पर इधर पाठकों एवं साधकों की जिज्ञासा और समय

की मांग के कारण इसे प्रकाशित करना उचित समझा। यदि कभी कहीं वह महान विभूति इस पुस्तक को पढ़ें तो मुझे क्षमा प्रदान करें। इस पुस्तक को तैयार करने में कुछ प्राचीन अर्वाचीन पुस्तकों की सहायता स्तोत्रादि संकलन हेतु ली गई हैं, इसके लिए उनका आभारी हूं।

अन्त में मेरी आपसे प्रार्थना है कि आप इस परमोपयोगी पुस्तक 'श्री कुण्डलिनी सिद्धि मंत्र साधना' को आरम्भ से अन्त तक पढ़ें, समझें और योग्य गुरु के निर्देशन में यह साधना करें। आपको अवश्य सफलता प्राप्त होगी। मेरी शुभकामनायें और सद्भावनायें सदैव आपके साथ हैं।

प्रकाश नाथ तंत्रेश
संस्थापक—
भारतीय प्राच्यविद्या संस्थान
वैशाख पूर्णिमा, वि. २०४९ सं०
गोरक्ष नाथ जयन्ती

तंत्र मंत्र यंत्र

प्रस्तुति—तांत्रिक बहल

प्रस्तुत पुस्तक का नाम अवश्य ही चकित कर देने वाला है, क्योंकि आचार्य चाणक्य राजनीति एवं अर्थशास्त्र के प्रकांड पंडित तो थे ही पर इसके साथ ही वह मन्त्र तन्त्र के भी प्रबल ज्ञाता थे, यह बात बहुत ही कम लोग जानते हैं। चाणक्य विरचित मन्त्रों-तन्त्रों का यह अनुपम संग्रह प्रस्तुत करने का श्रेय 'तांत्रिक बहल' को जाता है। इस विषय की अतीव रुचि के कारण और तन्त्र सबके लिए उपलब्ध कराने का दृढ़ संकल्प लिए प्रस्तुतकर्ता ने वास्तव में एक खोजपूर्ण और साहस का कार्य किया है। आशा है इस दुर्लभ ग्रन्थ के प्रकाशन से पाठक लाभान्वित होंगे।

इसी पुस्तक के द्वितीय खण्ड—सरल तांत्रिक प्रयोग में लेखक ने सामान्य जीवन में काम आने वाले कुछ अनुभूत मन्त्र-तन्त्र भी दिए हैं।

लाटरी ज्योतिष

लेखक—तांत्रिक बहल

लाटरी—प्राय: लोग इसे प्रारब्ध या भाग्य का खेल कहते हैं लेकिन वास्तव में यह अंकों का चमत्कार है, क्योंकि अंक जिसके पक्ष में रहते हैं, भाग्य भी उसी का साथ देता है। इसी कारण ज्योतिष और तंत्र से इसका गहरा सम्बन्ध बन जाता है। इस पुस्तक में दिए गए निर्देशों का सहारा लेकर आप भी ज्ञात कर सकते हैं कि आपकी लाटरी निकलेगी या नहीं ? कब निकलेगी ? और कौन-कौन से योग-प्रयोग हैं जो आपको भी लाटरी का लाभ प्रदान कर सकते हैं।

काली उपासना

संग्रहकर्ता : स्वामी उग्रचण्डेश्वर 'कपाली'

इस पुस्तक में काली उत्पत्ति की कथा, काली स्तुति, काली का स्वरूप, काली साधन यन्त्र, कालिका सहस्त्र नाम स्तोत्र, कालिकाष्टक और कई आरतियाँ श्री काली माता को प्रसन्न करने के लिए दी गई हैं। साधनों और मन्त्र-तन्त्र के इच्छुकों के लिए उत्तम पुस्तक है।

श्री भैरव उपासना

इस ग्रन्थ में भैरव उत्पत्ति की कथा, भैरव चालीसा, भैरवाष्टक, भैरव के १०८ नाम, भैरव सहस्र नाम स्तोत्र, बटुक भैरव यन्त्र, भैरव उपासना विधि, भैरोंनाथ दन्त कथा और भैरव जी की आरतियाँ इत्यादि सम्मिलित की गई हैं।

रूद्राक्ष महात्म्य और धारण विधि

लेखक—बाबा औढरनाथ 'तपस्वी'

इस पुस्तक में रूद्राक्ष महात्म्य, रूद्राक्ष की उत्पत्ति, रूद्राक्ष धारण विधि, रूद्राक्ष की परम शक्तियां, रूद्राक्ष के लक्षण और मन्त्र न्यास, जपमाला के लक्षण, रूद्राक्ष का रोगों में प्रयोग, रूद्राक्ष खरीदते समय सावधानियाँ तथा अनेक आवश्यक बातों का संकलन।

रूद्राक्ष भस्म और त्रिपुण्ड्र विज्ञान

लेखक—डॉ० रामकृष्ण उपाध्याय

रूद्राक्ष की व्युत्पति, उत्पत्ति लक्षण, महत्ता, मुखभेद, जातियाँ धारण करने के मन्त्र, माला जप, वनस्पति विज्ञान और आयुर्वेदीय दृष्टिकोण से रुद्राक्ष का अध्ययन एवं भस्म त्रिपुण्ड्र से सम्बन्धित जानकारी।

रणधीर बुक सेल्स (प्रकाशन) हरिद्वार
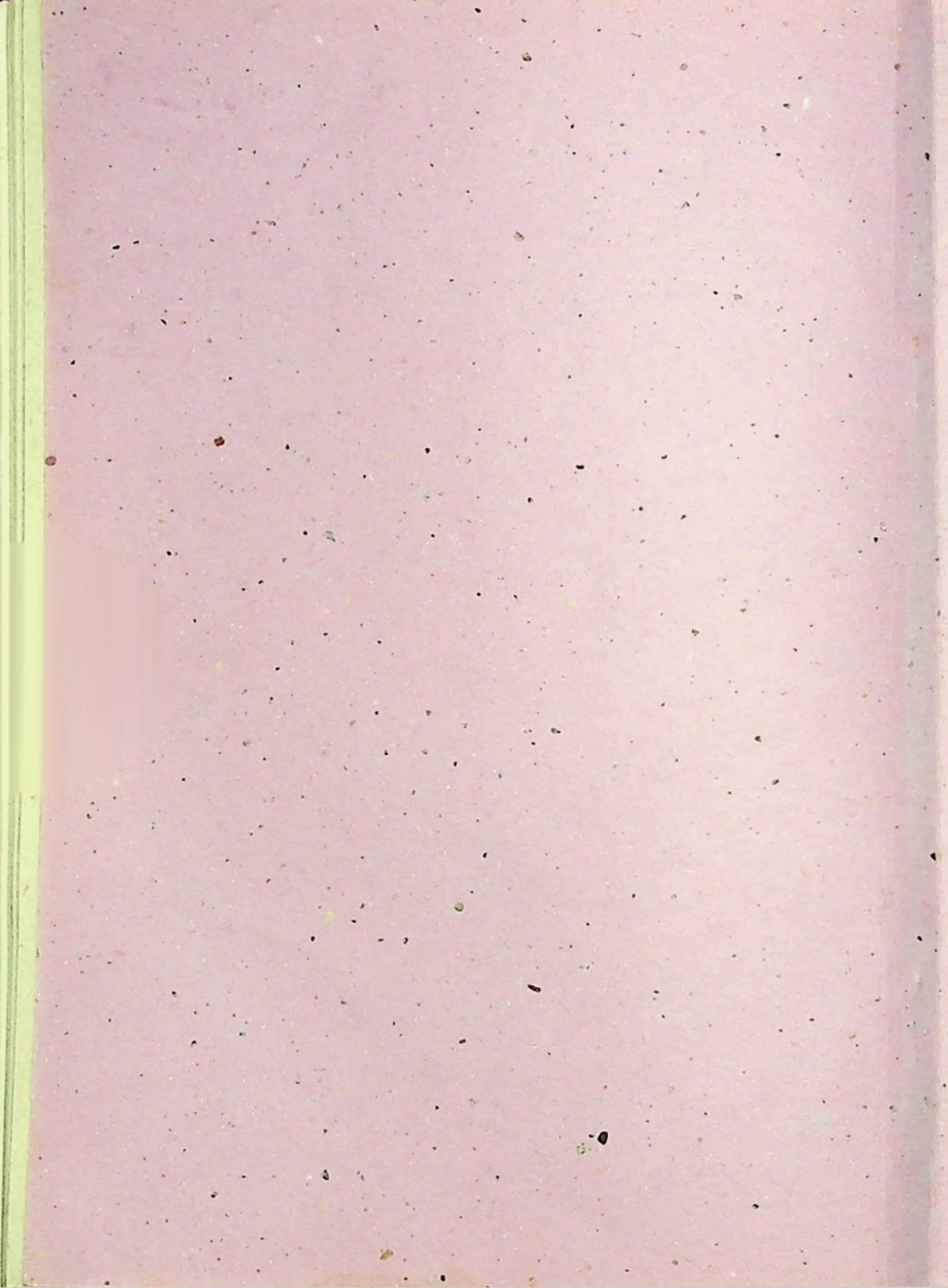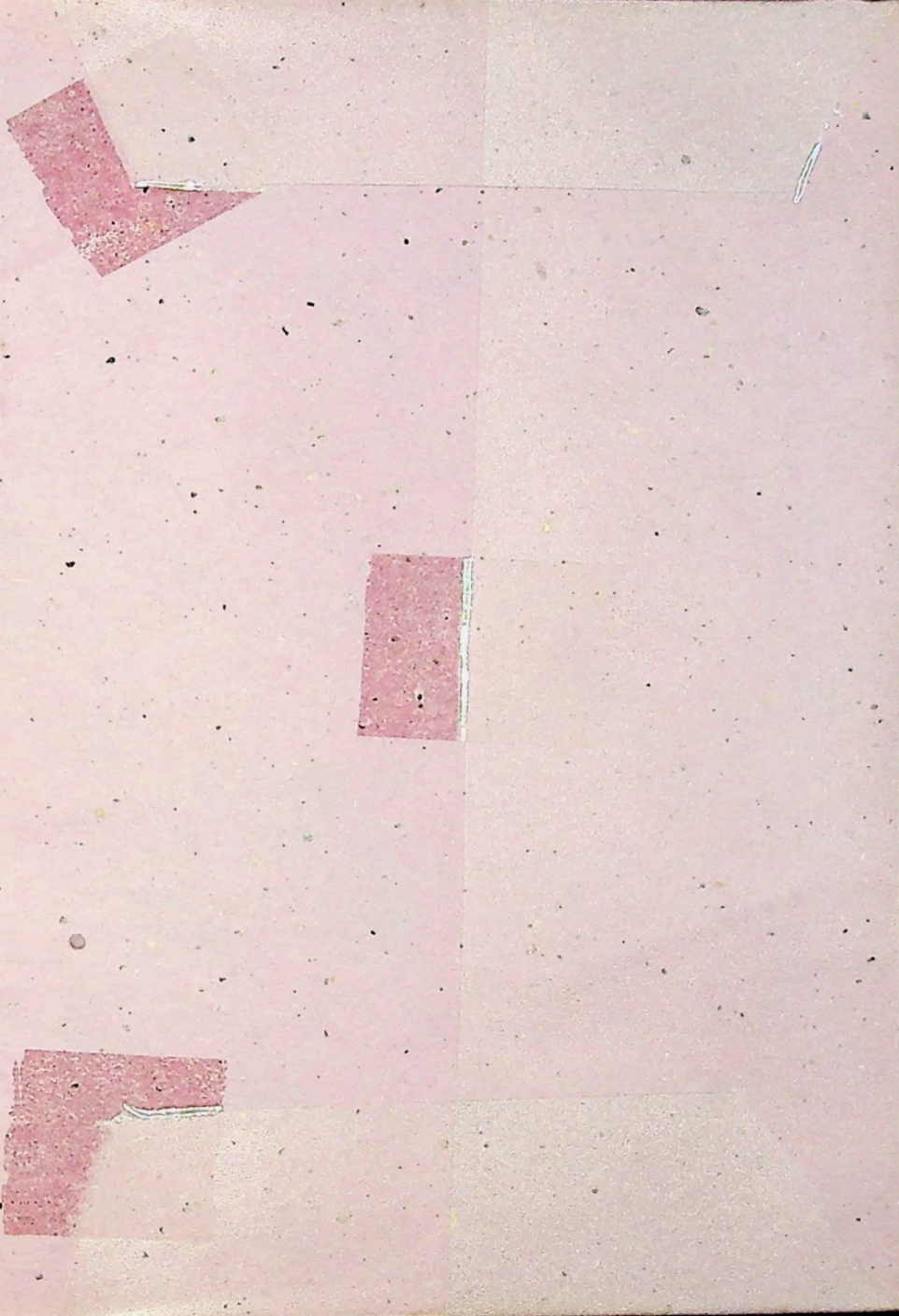
तप और तीर्थ से स्वर्ग की प्राप्ति होती है, मोक्ष की नहीं,
मोक्ष प्राप्ति के लिए इस ग्रन्थ का मनन ही एकमात्र साधन है।

योगवाशिष्ठ (महारामायण)

व्याख्याकार—श्री नन्द लाल दशोरा

भारतीय अध्यात्म ग्रन्थों में योगवाशिष्ठ का स्थान सर्वोपरि है। अद्वैत की धारणा को परिपुष्ट करने वाला, अध्यात्म के गूढ़ सिद्धान्तों का विवेचन करने वाला, एवं भारतीय दर्शन की मान्यता का समस्त सार इसमें समाहित है। भारतीय चिंतन का यह प्रतिनिधि ग्रन्थ है जिसके मनन से समस्त भ्रांतिपूर्ण धारणाऐं निर्मूल होकर सत्य-स्वरूप का ज्ञान हो जाता है। महर्षि वशिष्ठ ने जो ज्ञान अपने पिता ब्रह्मा से प्राप्त किया था वह उन्होंने भगवान राम को दिया जिससे वह जीवन्मुक्त होकर रहे। इसी वशिष्ठ और राम संवाद के ज्ञान का संग्रह महर्षि बाल्मीकि ने जनकल्याण के लिए किया था।

यह ग्रन्थ केवल तात्विक विवेचन ही नहीं है अपितु मोक्ष साधना की विधि को इसमें इस प्रकार स्पष्ट किया गया है कि प्रत्येक पाठक इसका प्रयोग घर बैठे कर सकता है। इसमें न हठयोग जैसी कठिन क्रियायें करनी है, न मंत्रजाप, न पूजा और प्रार्थना करनी है। यदि कोई साधक इसमें दी गई विधियों को पूर्णतया प्रयोग करे तो उसे मोक्ष लाभ मिल सकता है।

इस ग्रन्थ को पढ़ने के पश्चात् किसी अन्य ग्रन्थ को पढ़ने की आवश्यकता नहीं रहती क्योंकि जो बातें इस ग्रन्थ में हैं वे अन्य ग्रन्थों में भी मिलेंगी; जो इसमें नहीं हैं वे कहीं नहीं मिलेंगी। महर्षि वशिष्ठ ने अनेक उपाख्यानों के माध्यम से जो ज्ञान, भगवान राम को दिया वही योग वाशिष्ठ के नाम से विख्यात यह अमर ग्रन्थ वेदान्त का सारभूत उपदेश माना गया है जिसे अब नवीनतम शैली में श्री नन्द लाल दशोरा ने समझाने का अनथक प्रयास किया है।

प्रकाशक—रणधीर बुक सेल्स (प्रकाशन)
श्रवण नाथ नगर, हरिद्वार उ.प्र.